लेव लंदाऊ, यूरी रूमेर

सापेक्षिकता-सिद्धान्त क्या है?

मीर प्रकाशन

Л.Д. Ландау,
Ю.Б. Румер

ЧТО ТАКОЕ ТЕОРИЯ ОТНОСИТЕЛЬНОСТИ

Издательство
«Советская Россия»
Москва

लेव लंदाऊ, यूरी रूमेर

सापेक्षिकता-सिद्धान्त क्या है ?

मीर प्रकाशन, मास्को

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
५ ई, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली-११००५५

राजस्थान पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा) लि.
चमेलीवाला मार्केट, एम.आई. रोड, जयपुर-302001

तीसरे रूसी संस्करण की भूमिका (1975)

परिस्थितिवश यह भूमिका मुझे अकेले लिखनी पड़ रही है। आज जब तीसरा संस्करण प्रकाशित हो रहा है ले० लंदाऊ हमारे बीच नहीं रहे।

जो कुछ हमने साथ-साथ मिल कर लिखा था उसमें कोई परिवर्तन लाना मैंने उचित नहीं समझा।

यू० रूमेर

अल्बर्ट आईंस्टाइन द्वारा सापेक्षिकता-सिद्धांत का प्रतिपादन हुए अस्सी से ज्यादा वर्ष बीत चुके हैं। विगत अवधि में यह सिद्धांत, जो आरंभतः मात्र एक अंतर्विरोधी बौद्धिक खेल प्रतीत होता था, भौतिकी के एक आधार-स्तंभ में परिणत हो चुका है। बिना इस सिद्धांत के आधुनिक भौतिकी लगभग उसी तरह असंभव है, जैसे बिना अणु-परमाणु की अवधारणाओं के। अनगिनत भौतिकीय संवृत्तियां हैं जिनकी व्याख्या सापेक्षिकता-सिद्धांत के बिना असंभव है। इसके आधार पर "प्राथमिक" कणिकाओं के त्वरित्र जैसे जटिल उपकरण बन रहे हैं, नाभिकीय प्रतिक्रियाओं से संबंधित कलन संपन्न होते हैं आदि, आदि।

यह खेद की बात है कि सापेक्षिकता-सिद्धांत से विशेषज्ञों को छोड़ कर अन्य साधारण लोग बहुत कम परिचित हैं। इसकी गणना "क्लिष्ट" सिद्धांतों में होती है और यह सही भी है। सामान्य व्यक्ति से, जो भौतिकविद् नहीं है, इसके जटिल गणितीय उपकरण को व्यवहार में लाने की अपेक्षा नहीं की जा सकती।

फिर भी हमारी मान्यता है कि सापेक्षिकता-सिद्धांत की मुख्य अवधारणाएं और उसके मुख्य विचार

अविशेषज्ञों के लिये सुलभ शैली में व्यक्त किये जा सकते हैं।

हमें आशा है कि इस पुस्तक को पढ़ने के बाद पाठक फिर कभी इस तरह नहीं सोचेगा : सापेक्षिकता-सिद्धांत का अर्थ इतना ही है कि "दुनिया में सब कुछ सापेक्षिक है"। उल्टा, वह देखेगा कि भौतिकी के किसी भी अन्य सही सिद्धांत की भाँति यह सिद्धांत भी वस्तुगत सत्य को व्यक्त करता है, जो किसी की भी इच्छा या रुचि पर निर्भर नहीं करता। व्योम, काल और द्रव्यमान की पुरानी अवधारणाओं को त्याग कर हम और गहराई से समझने लगे हैं कि दुनिया वास्तविकता में कैसे बनी है।

लेखक-वृंद

विषय-सूची

अध्याय 1

सापेक्षिकता जिसके हम आदी हैं

क्या हर कथन का अर्थ होता है?

स्पष्ट है, नहीं। यहां तक कि यदि पूर्णतया सार्थक शब्द लें और उन्हें पूर्णतया व्याकरण-संगत रूप में मिलाया जाये, तब भी संभव है कि कोई अर्थ न निकले। उदाहरणार्थ, कथन "यह पानी त्रिभुजाकार है" का कोई माने लगाना कठिन है।

पर कठिनाई यह है कि सभी निरर्थकताएं इतनी स्पष्ट नहीं होतीं और अक्सर प्रथम दृष्टि में पूरी तरह अर्थवान प्रतीत होने वाला कथन भी विश्लेषण के बाद निरर्थक सिद्ध हो जाता है।

दायां और बायां

घर रास्ते के किस ओर है – दायें या बायें? इस प्रश्न का उत्तर तुरंत नहीं दिया जा सकता।

पुल से जंगल की ओर चलने पर घर बायीं ओर होगा और जंगल से पुल की ओर चलने पर घर दायीं ओर होगा। स्पष्ट है कि रास्ते के दायें या बायें पार्श्व की बात करते समय हम दिशा को नजर-अंदाज नहीं करें, ऐसा करना गलत होगा क्योंकि इसीके सापेक्ष हम दायां और बायां निर्दिष्ट करते हैं।

नदी के दायें तट की बात करना इसीलिये मानी रखता है क्योंकि नदी की दिशा पानी की धारा ही निर्धारित करती है। इसी तरह से यह कहना भी कि मोटर-गाड़ियां दायें चलती हैं, सिर्फ इसलिये बेमानी नहीं होगा कि स्वयं मोटर-गाड़ियों की गति सड़क की एक दिशा स्थापित कर देती है। (फिर भी यह कथन उन देशों के लिये निरर्थक है, जहां सड़क पर दायें नहीं बायें चलते हैं।)

इस प्रकार, "दायें" और "बायें" की अव-धारणाएं सापेक्षिक हैं: वे तभी अर्थ रखती हैं, जब
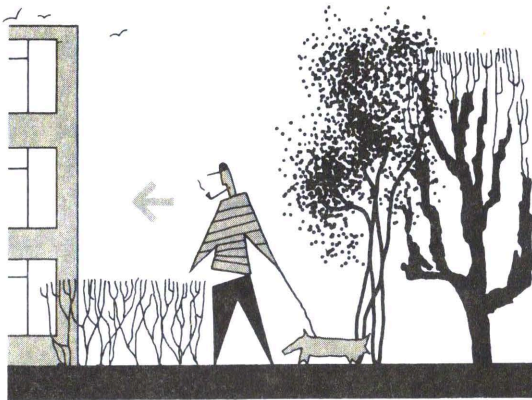
दिशा निर्दिष्ट की जाती है जिसके सापेक्ष उनकी परिभाषा दी जाती है।

अभी दिन है या रात?

उत्तर इस बात पर निर्भर करता है कि प्रश्न किस जगह पूछा गया है। जब मास्को में दिन होता है, व्लादीवोस्तोक में रात होती है। इसमें कोई अंतर्विरोध नहीं है। बात इतनी ही है कि दिन और रात सापेक्षिक अवधारणाएं हैं और इस प्रश्न का उत्तर तबतक नहीं दिया जा सकता, जबतक आप यह न बतायेंगे कि पृथ्वी के किस बिन्दु की बात चल रही है।

कौन बड़ा है ?

बायें चित्र में मोटर-गाड़ी स्पष्टतः सड़क के चिन्ह से बड़ा है और दायें चित्र में – सड़क का चिन्ह मोटर-गाड़ी से बड़ा है। यहां भी कोई अंतर्विरोध नहीं है। बात यह है कि ये चित्र दो भिन्न बिंदुओं पर स्थित प्रेक्षकों द्वारा लिये गये हैं: एक मोटर-गाड़ी के निकट खड़ा था, दूसरा सड़क के चिन्ह के पास। चित्र के लिये वस्तुओं के वास्तविक आकार महत्त्वपूर्ण नहीं होते, उसके लिये वह कोण महत्त्वपूर्ण होता है, जिसपर
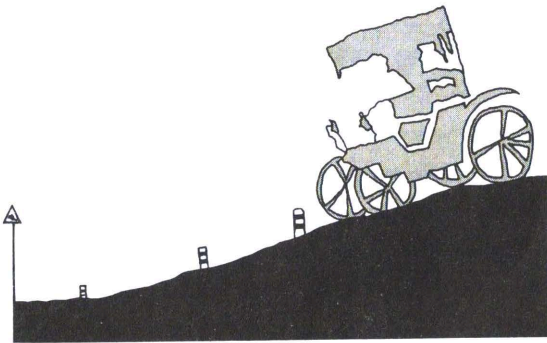
हम वस्तुओं को देखते हैं। जाहिर है कि वस्तुओं की ये कोणिक मापें सापेक्षिक होती हैं। वस्तु की कोणिक माप बताना अर्थहीन है, यदि आप व्योम में प्रेक्षण-बिंदु की स्थिति नहीं बताते। उदाहरणार्थ, यदि आप कहते हैं, "मीनार 45° के कोण पर दिखता है", तो आपका कथन निरर्थक है। इसके विपरीत, आपका कथन, कि मीनार उससे 15 मीटर दूर स्थित बिंदु से 45° के कोण पर दिखता है, सार्थक है; इस कथन से निष्कर्ष निकलता है कि मीनार की ऊँचाई 15 मीटर है।
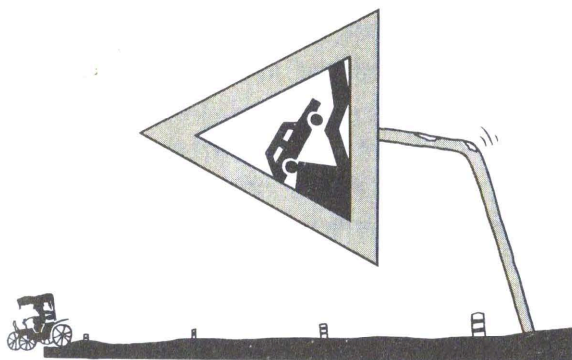
सापेक्षिक निरपेक्ष प्रतीत होता है

यदि प्रेक्षण-बिंदु को कुछ दूर कर दिया जाये, तो कोणिक माप में भी कुछ परिवर्तन आ जायेगा। इसीलिये कोणिक माप का प्रयोग ज्यादातार ज्योतिर्विद्या में होता है। तारक-मानचित्र में तारों के बीच कोणिक दूरी दिखायी जाती है; कोणिक दूरी उस कोण को कहते हैं, जिसपर तारों के बीच की दूरी धरातल से दिखती है।

ज्ञात है कि हम पृथ्वी पर कहीं भी चले जायें, तारक-मंडित आकाश को उसके किसी भी बिंदु से देखें, तारे एक-दूसरे से हमेशा एक ही दूरी पर दिखेंगे। इसका कारण यह है कि वे हमसे कल्पनातीत दूरियों पर स्थित हैं और इन दूरियों की तुलना में पृथ्वी पर हमारा स्थानांतरण नगण्य है। इसीलिये विचाराधीन परिस्थिति में हम कोणिक माप को परम (निरपेक्ष) माप मान सकते हैं।

यदि सूर्य के गिर्द पृथ्वी के परिभ्रमण का उपयोग करें, तो कोणिक माप में परिवर्तन प्रेक्ष्य ही सही, पर अत्यल्प होगा। यदि प्रेक्षण-बिंदु किसी दूरस्थ तारे – जैसे सीरिउस – पर रखें, तो कोणिक मापें इस तरह बदलेंगी कि हमारे आकाश में परस्पर दूर स्थित तारे एक-दूसरे के निकट नजर आने लगेंगे और परस्पर निकट स्थित तारे एक दूसरे से दूर दिखने लगेंगे।

निरपेक्ष सापेक्षिक सिद्ध होता है

हम अक्सर कहते हैं: यह ऊपर है, यह नीचे है। ये अवधारणाएं निरपेक्ष हैं या सापेक्षिक?

इस प्रश्न का उत्तर भिन्न कालों में लोग भिन्न प्रकार से दिया करते थे। जब पृथ्वी के गोल होने की बात अज्ञात थी, लोग इसे पूरी की तरह चपटी मानते थे और उदग्र दिशा उनके लिये एक निरपेक्ष अवधारणा थी। वे मानते थे कि धरातल के सभी बिंदुओं पर उदग्र दिशा बिल्कुल एक जैसी है, इसलिये निरपेक्ष ऊपर या निरपेक्ष नीचे की बात करना उनके लिये बिल्कुल स्वाभाविक था।

जब पता चला कि पृथ्वी गोले की तरह है, लोगों के मस्तिष्क में उदग्र का आसन ... हिल गया।

सचमुच, पृथ्वी के गोल होने की वजह से उदग्र दिशा धरातल के उस बिंदु की स्थिति पर निर्भर करती है, जिससे हो कर उदग्र रेखा गुजरती है। धरातल के भिन्न बिंदुओं पर उदग्र दिशाएं भी भिन्न होंगी। अब चूँकि 'ऊपर' और 'नीचे' की अवधारणाओं का तबतक कोई अर्थ नहीं निकलता, जबतक हम धरातल का संबंधित बिंदु नहीं बताते, इसलिये ये निरपेक्ष अवधारणाएं अब सापेक्षिक हो गयी हैं। ब्रह्मांड में कोई एक उदग्र दिशा नहीं है। इसीलिये व्योम में किसी भी दिशा के लिये हम धरातल पर एक बिंदु दिखा सकते हैं, जहां यह दिशा उदग्र होगी।
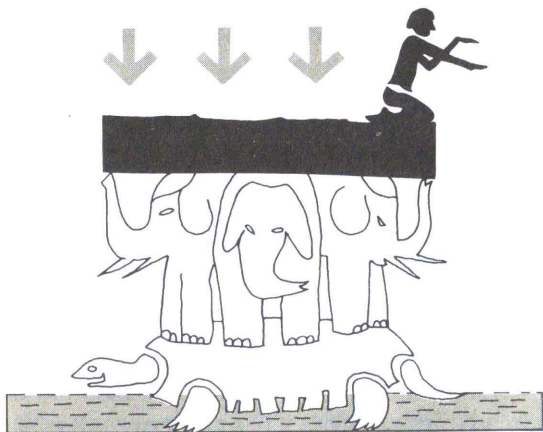
'सामान्य बुद्धि' का विद्रोह

ये बातें अभी हमें बिल्कुल साफ लगती हैं, हमें इन पर कोई संदेह नहीं होता। लेकिन इतिहास साक्षी है कि 'ऊपर' और 'नीचे' की सापेक्षिकता को समझना लोगों के लिये इतना आसान नहीं था। लोगों को यदि किसी अवधारणा की सापेक्षिकता दैनंदिन अनुभवों से स्पष्ट नहीं होती, तो वे इसे निरपेक्ष मानने लगते हैं। यह उनकी स्वाभाविक प्रवृति है ('दायें' और 'बायें' की स्थिति में भी यही बात थी)।

पृथ्वी के गोल होने के विरुद्ध हास्यास्पद मध्ययुगीन तर्क की याद करें: लोग चमगादड़ की तरह उलटा लटकते हुए कैसे चल सकते हैं?

इस तर्क में गलती यही है कि लोग पृथ्वी के गोल आकार से उदग्र की सापेक्षिकता का निष्कर्ष नहीं निकालते।

यदि उदग्र की सापेक्षिकता के सिद्धांत को गलत कहें और यह मान लें कि मास्को में (उदाहरण के लिये) उदग्र की दिशा निरपेक्ष है, तो बेशक न्यूजीलैंड के लोग चमगादड़ की तरह उलटा लटकते हुए चल रहे हैं। लेकिन यहां पर एक बात याद रखनी चाहिये कि न्यूजीलैंड के लोगों के लिये हम भी उलटा लटकते हुए चलते हैं। इन दृष्टिकोणों में कोई विरोध नहीं है, क्योंकि उदग्र दिशा वास्तविकता में निरपेक्ष नहीं, सापेक्षिक अवधारणा है।

यह बता दें कि उदग्र की सापेक्षिकता के वास्तविक

महत्त्व को हम तभी महसूस करते हैं, जब धरातल पर एक-दूसरे से पर्याप्त दूर स्थित जगहों, जैसे मास्को और न्यूजीलैंड की तुलना करते हैं। यदि दो परस्पर निकट स्थित जगहों, जैसे मास्को के दो घरों, पर विचार किया जाये, तो सभी उदग्र रेखाएं व्यवहारतः समांतर मानी जा सकती हैं, अर्थात् उदग्र दिशा को निरपेक्ष माना जा सकता है।

सिर्फ जब धरातल की माप के साथ तुलनीय क्षेत्रों से हमारा वास्ता पड़ता है, तभी निरपेक्ष उदग्र के उपयोग से हम परस्पर विरोधी और बेतुके निष्कर्ष प्राप्त करने लगते हैं।

उपरोक्त उदाहरण दिखाते हैं कि हमारे दैनंदिन जीवन में प्रयुक्त अनेक अवधारणाएं सापेक्षिक हैं, अर्थात् वे तभी अर्थ रखती हैं, जब प्रेक्षण की परि-स्थितियां बतायी जाती हैं।

अध्याय 2

व्योम सापेक्षिक है

वहीं, या कहीं और?

अक्सर हम कहते हैं कि एक ही जगह दो घटनाएं घटी हैं, और इसके हम इतना आदी हो गये हैं कि इस कथन को कोई निरपेक्ष अर्थ देने की कोशिश करते हैं। पर वास्तविकता में इसका कोई अर्थ नहीं है। यह कुछ ऐसी ही बात हुई, जब हम कहते हैं: अभी पाँच बजे हैं, लेकिन यह नहीं बताते, कहां – मास्को में या शिकागो में।

स्पष्टता के लिये मान लें कि मास्को-व्लादीवोस्तोक एक्स्प्रेस में जा रही दो सहेलियां निश्चय करती हैं कि हर दिन एक ही डब्बे में मिलेंगी और अपने-अपने पतियों को पत्र लिखा करेंगी। लेकिन उनके पति शायद ही सोचेंगे कि पत्र हर दिन एक ही जगह से लिखे जाते हैं। उलटा, उनके पास यह मानने का पूरा आधार है कि पत्र लिखने के स्थान परस्पर सैकड़ों किलोमीटर दूर हैं। उन्हें पत्र यारोस्लाव्ल से मिलते हैं, फिर पेर्म से, स्वेर्द्लोव्स्क और त्यूमेन से, ओम्स्क और खबारोव्स्क से।

इस प्रकार, दो घटनाएं – यात्रा के पहले और दूसरे दिन पत्रों का लेखन – सहेलियों की दृष्टि से

एक ही स्थान पर घटी हैं – गाड़ी के एक निश्चित डब्बे में। लेकिन पतियों की दृष्टि से ये दो घटनास्थल एक-दूसरे से सैकड़ों किलोमीटर दूर हैं।

कौन सही है – सहेलियां या उनके पति? किसी को भी सही मानने का कोई कारण हमारे पास नहीं है। बिल्कुल साफ है कि "व्योम का एक ही स्थान" जैसी अवधारणाएं केवल सापेक्षिक अर्थ रखती हैं।

महाव्योम में दो तारे संपाती हो रहे हैं, ऐसा कथन कोई अर्थ इसीलिये रखता है कि यह निर्दिष्ट किया जाता है कि प्रेक्षण पृथ्वी से किया जा रहा है। यह कहना कि दो घटनाएं व्योम में संपाती हो रही हैं – संभव है, पर तभी जब वह पिंड निर्दिष्ट किया जाता है जिसके सापेक्ष इन घटनाओं के स्थान निर्धारित किये जाते हैं।

इस प्रकार व्योम में स्थान की अवधारणा भी सापेक्षिक है। जब हम पिंड की व्योम में स्थिति के बारे में कहते हैं तो हमारा मतलब हमेशा अन्य पिंडों के सापेक्ष उसकी स्थिति से होता है।

पिंड कहां है, जैसे प्रश्न के उत्तर में यदि हमने अन्य पिंडों के बारे में ध्यान नहीं दिया तो ऐसे प्रश्न को हमें अर्थहीन मानना चाहिये।

पिंड वास्तव में कैसे गति करता है?

'व्योम में पिंड का स्थानांतरण' भी उपरोक्त धारणा की तरह सापेक्षिक है। यदि हम कहते हैं कि पिंड स्थानांतरित हो गया तो इसका अर्थ केवल इतना ही है कि उसकी अपनी स्थिति अन्य दूसरे पिंडों के सापेक्ष बदल गई है। एक दूसरे के सापेक्ष स्थानांतरित होने वाली प्रयोगशालाओं से यदि पिंड की गति का प्रेक्षण किया जाये तो यह गति बिल्कुल भिन्न दिखाई देगी।

उड़ते हुए वायुयान से पत्थर फैंका जाता है। पत्थर वायुयान के सापेक्ष सीधी रेखा पर गिरता है पर पृथ्वी के सापेक्ष परवलयी रेखा पर। आखिर वास्तव में पत्थर की गतिरेखा कैसी है?

इस प्रश्न का उतना ही कम अर्थ है जितना इस प्रश्न का: वास्तव में चन्द्रमा किस कोण पर दिखता है? सूर्य से दिखाई देने वाले कोण पर या पृथ्वी से?

वक्र रेखा का ज्यामितीय रूप (जिस पर पिंड का स्थानांतरण होता है) उसी तरह सापेक्षिक होता है जिस तरह इमारत का फोटो। इमारत के आगे और पीछे के फोटो लेने पर जिस प्रकार ये फोटो भिन्न होंगे उसी प्रकार भिन्न प्रयोगशालाओं से पिंड की गति का प्रेक्षण करने पर हम उसकी गति की भिन्न वक्र रेखाएं प्राप्त करेंगे।
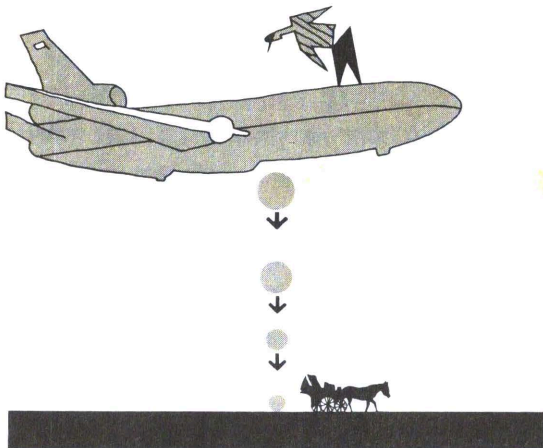
क्या सभी दृष्टिकोण समान मूल्यों के होते हैं ?

यदि हमारी रुचि व्योम में पिंड की गति के प्रेक्षण पर प्रक्षेप-पथ (वक्र रेखा जिस पर पिंड चलता है) के आकार के अध्ययन तक सीमित होती तो प्राप्त होने वाले चित्र की सादगी से ही प्रक्षेप-स्थान के चयन का प्रश्न हल हो जाता।

कुशल फोटोग्राफर फोटो खींचने की जगह का चयन करता है और इसके अतिरिक्त बनने वाले फोटो की सुंदरता और कंपोज का भी ध्यान रखता है।

परंतु व्योम में पिंड के स्थानांतरण के अध्ययन के लिये हमें और भी कुछ चाहिये। हम न केवल
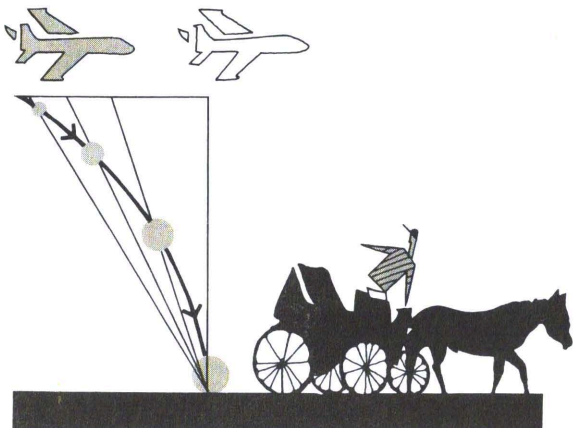
प्रक्षेप-पथ को ही जानना चाहते हैं बल्कि यह भविष्य-वाणी भी करना चाहते हैं कि प्रस्तुत परिस्थितियों में पिंड किस पथ पर चलेगा। दूसरे शब्दों में हम गति के ऐसे नियम जानना चाहते हैं जो पिंड को एक विशेष तरह से ही चलने को मजबूर करते हैं, दूसरी तरह नहीं।

आइये, इसी दृष्टिकोण से गति के सापेक्षिक प्रश्नों को देखें – और स्पष्ट करें कि व्योम में सभी स्थितियां समान मूल्य की नहीं होतीं।

यदि हम फोटोग्राफर के पास जाकर दफतरी पहचान-पत्र के लिये उसे फोटो खींचने को कहें तो स्पष्ट है कि चेहरे की ओर से हम फोटो खींचवाना

चाहते हैं न कि सिर की ओर से। इन्हीं आवश्यकताओं के द्वारा व्योम-बिन्दु को ज्ञात किया जाता है जहां से फोटोग्राफर को फोटो खींचना है। अन्य दूसरी स्थिति को हम नहीं मानते क्योंकि वह हमारी रखी शर्तों को पूरा नहीं करती।

विराम मिल गया !

पिंडों की गति पर बाह्य घटकों की क्रियाओं का प्रभाव पड़ता है। हम इन्हें बल कहेंगे। इन क्रियाओं के प्रभाव का अध्ययन करने के लिये हमें गति से संबंधित प्रश्नों को बिल्कुल नये सिरे से देखना होगा।

मान लें कि हमारे पास ऐसा पिंड है जिसपर किसी प्रकार के कोई बल काम नहीं कर रहे हैं। इस पिंड की गति की भिन्नता अनोखे ढंग से कम या

ज्यादा प्रक्षेप की स्थिति पर निर्भर करेगी। हालांकि यह मान लेना सही होगा कि प्रेक्षक की ऐसी स्थिति अधिक स्वाभाविक होती है जिस पर पिंड विराम अवस्था में होता है।

इस प्रकार अब हम विराम की बिल्कुल नई परि-भाषा दे सकते हैं जो दूसरे पिंडों के सापेक्ष प्रस्तुत पिंड के स्थानांतरण पर निर्भर नहीं करती। इस तरह : पिंड जिस पर कोई बाह्य बल कार्य नहीं करता, वह विरामावस्था में रहता है।

स्थिर प्रयोगशाला

विरामावस्था की उपलब्धि कैसे की जाए? कब विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि पिंड पर कोई बाह्य बल क्रियाशील नहीं है?

स्पष्ट है कि इसके लिये पिंड को अन्य सभी पिंडों से दूर ले जाना चाहिये ताकि वे उस पर प्रभाव न डाल सकें।

विराम में स्थित इस प्रकार के पिंडों से हम कम से कम कल्पना में ही एक पूरा प्रयोगशाला बना सकते हैं और फिर इस से प्रेक्षित गति के गुणों के बारे में चर्चा भी कर सकते हैं। ऐसी प्रयोगशाला को हम विरामावस्था में कह सकते हैं।

यदि किसी अन्य प्रयोगशाला में प्रेक्षित गति के गुण, स्थिर प्रयोगशाला के गुणों से भिन्न हैं तो हमें

यह कहने का पूरा अधिकार है कि प्रथम प्रयोगशाला गतिमान है।

क्या गाड़ी चल रही है?

स्थिर प्रयोगशालाओं की अपेक्षा गतिमान प्रयोगशालाओं में गति के बिल्कुल अन्य नियम निकलते हैं। यह स्थापित कर लेने के बाद गति की अवधारणा अपनी सापेक्षिक विशेषताओं को खोती हुई प्रतीत होती है। गति के बारे में आगे की चर्चाओं में हमें गति को विराम के सापेक्ष केवल लक्षित करना होगा और हम ऐसी गति को निरपेक्ष कहेंगे।

पर क्या प्रयोगशाला के सभी प्रकार के स्थानांतरण के कारण स्थिर प्रयोगशाला में गतिनियमों से विचलन प्रेक्षित होता है?

सीधी लाईन पर समान वेग से जा रही गाड़ी में बैठ जाएं, डब्बे में वस्तुओं की गति का प्रेक्षण करें
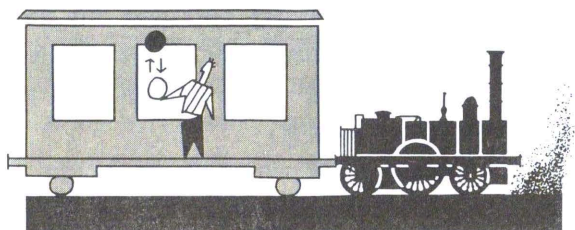
और गतिहीन गाड़ी में वस्तुओं की गति से इसकी तुलना करें।

दैनंदिन अनुभव दिखाते हैं कि सीधे तथा एकसमान वेग से चलने वाली गाड़ी में वस्तुओं की गति रुकी हुई गाड़ी में वस्तुओं की गति से जरा भी भिन्न नहीं होती। हम जानते हैं कि चलती गाड़ी में उदग्र ऊपर फेंका गया गेंद वापस हमारे हाथों में गिरेगा।

यदि तकनीकी कारणों से उत्पन्न होने वाले हिचकोलों की ओर ध्यान नहीं दिया जाये तो एकसमान वेग से चलती गाड़ी में सबकुछ वैसे ही होता है जैसे गतिहीन गाड़ी में।

पर यदि गाड़ी मंदित या त्वरित होने लगे, उसका वेग घटने या बढ़ने लगे, तो बात बिल्कुल दूसरी होगी। पहली स्थिति में हमें आगे की ओर झटका लगेगा और दूसरी स्थिति में पीछे की ओर झटका लगेगा और इस प्रकार हम गतिहीन गाड़ी में विरामावस्था से भिन्नता आसानी से अनुभव करेंगे।
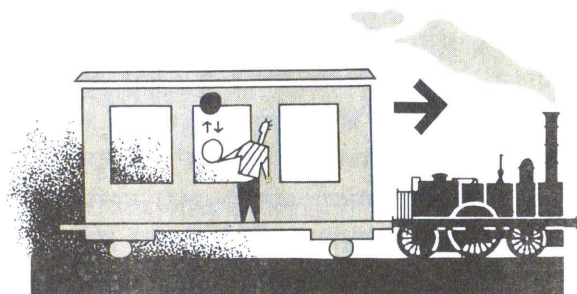
यदि समरूपता से चलती गाड़ी की गति की दिशा बदलेगी तो हम इसको इस तरह अनुभव करेंगे : दायीं तरफ के तीखे मोड़ हमें गाड़ी की बायीं तरफ गिरायेंगे और बायीं तरफ के तीखे मोड़ – गाड़ी की दायीं ओर। इन प्रेक्षणों की व्यापकता से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं : जबतक कोई प्रयोगशाला किसी स्थिर प्रयोगशाला के सापेक्ष एकसमान वेग से और सीधी चलती है, उसमें और स्थिर प्रयोगशाला की वस्तुओं के व्यवहार में असमानता देख पाना असंभव है। परंतु जैसे ही चलती प्रयोगशाला का वेग मात्रा के अनुसार बदलता है (बढ़ता या घटता है) या दिशा के अनुसार बदलता है (मोड़ पर) उसमें स्थित वस्तुओं का व्यवहार इससे तुरंत ही प्रभावित होने लगता है।

विराम कहीं नहीं है

सीधी और समरूप गतिमान प्रयोगशाला में स्थित वस्तुओं पर उसकी गति का प्रभाव नहीं पड़ता – यह असाधारण गुण हमें विराम की अवधारणा के पुन-र्मूल्यांकन के लिये विवश करता है। पता चलता है कि विराम अवस्था और सीधी तथा समरूप गति की अवस्था में कोई अंतर नहीं है। स्थिर प्रयोगशाला के सापेक्ष सीधी और समरूप गति से चलने वाली प्रयोग-शाला को स्वयं विरामावस्था में माना जा सकता है। इसका मतलब है कि कोई एक निरपेक्ष विराम नहीं

होता, विराम के अनेक 'स्वरूप' होते हैं। एक ही स्थिर प्रयोगशाला नहीं होती, असंख्य स्थिर प्रयोगशालाएं होती हैं, जो एक दूसरे के सापेक्ष अलग-अलग वेगों से सरल रेखाओं पर समरूपता के साथ गतिमान रहती हैं।

चूंकि विराम निरपेक्ष नहीं है, बल्कि सापेक्ष सिद्ध होता है इसलिये हमेशा निर्दिष्ट करना पड़ता है कि एक दूसरे के सापेक्ष सीधी और समरूप चलने वाली असंख्य प्रयोगशालाओं में से किसके सापेक्ष गति का प्रेक्षण करें।

इस प्रकार, गति निरपेक्ष होती है जैसे कथन को बेशक हम सिद्ध नहीं कर सके।

ऐसा प्रश्न हमेशा उठाया जा सकता है कि किस 'विराम' के सापेक्ष हम गति का प्रेक्षण कर रहे हैं।

इस तरह हमें प्रकृति का एक महत्त्वपूर्ण नियम मिलता है जिसको प्रायः गति की सापेक्षिकता का सिद्धांत कहा जाता है। सिद्धांत है: एक दूसरे के सापेक्ष सीधी और समरूप गति से चलने वाली सभी प्रयोगशालाओं में पिंड की गति समान नियमों का पालन करती है।

जड़त्व का नियम

गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत से यह निष्कर्ष निकलता है कि जिस पिंड पर कोई बाह्य बल नहीं लग रहा है, वह न केवल विराम या स्थिर अवस्था में ही रहता है

बल्कि सीधे और समरूप वेग की अवस्था में भी रह सकता है। इस स्थिति को भौतिकी में जड़त्व का नियम कहते हैं।

फिर भी दैनंदिन जीवन में यह नियम अदृश्य रहता है और प्रत्यक्ष रूप से प्रकट नहीं होता। हालांकि जड़त्व के नियमानुसार सीधी और समरूप गति से चलते हुए पिंड को, बाह्य बलों की अनुपस्थिति में निरंतर चलते रहना चाहिये। लेकिन प्रेक्षण से हमें ज्ञात है कि पिड, जिसपर हम बल नहीं लगाते, रुक जाता है।

इसका तात्पर्य यह है कि सभी पिंडों पर, जिनका हम प्रेक्षण करते हैं, कोई न कोई बाह्य बल कार्य करता है, जैसे घर्षण-बल। इसलिये जड़त्व-नियम के प्रेक्षण की आवश्यक शर्त – पिंड पर बाह्य बल की अनुपस्थिति – पूरी नहीं होती। पर प्रायोगिक शर्तों को सुधार कर और घर्षण-बल को कम करके जड़त्व-नियम के प्रेक्षण के लिये आवश्यक आदर्श शर्तों के निकट पहुंचा जा सकता है। इस तरह दैनंदिन जीवन के प्रेक्षण में गति और जड़त्व नियम की सत्यता को सिद्ध कर सकते हैं।

गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत की खोज महान खोजों में से एक है। इसके बिना भौतिकी की प्रगति असंभव होती। इस खोज के लिये हम गैलीलीओ गैलीली के आभारी हैं जिन्होंने अरस्तु के उपदेशों के विरुद्ध बोलने का साहस किया। स्मरण रहें कि उस समय अरस्तु

के विचार यूरोप में पूरी तरह हावी थे और कैथोलिक चर्च भी उन्हीं का समर्थन करता था। अरस्तु के अनुसार बल लगाने पर ही गति संभव है और बल के बिना पिंड की गति एकदम रुक जानी चाहिये। परंतु गैलीली के ज्वलत प्रयोगों ने सिद्ध कर दिया कि गतिशील वस्तुओं की गति में रुकावट का कारण घर्षण-बल है और इस बल की अनुपस्थिति में समरूप वेग से गतिमान पिंड हमेशा चलता ही रहेगा।

वेग भी सापेक्षिक है!

गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत के अनुसार यह निर्दिष्ट किये बिना कि किस जड़त्व-फ्रेम के सापेक्ष वेग नापा गया है, पिंड की सीधी तथा समरूप गति के बारे में कुछ कहना उतना ही कम अर्थ रखता है जितना किसी जगह के देशांश के बारे में कुछ कहना, जबकि यही तय नहीं हुआ हो कि किस देशांतर रेखा से देशांश नापना है।

वेग भी एक सापेक्षिक अवधारणा प्रतीत होता है। भिन्न जड़त्व-फ्रेमों के सापेक्ष एक ही वस्तु के वेग का निर्धारण करके हम भिन्न परिणाम प्राप्त करेंगे। परंतु वेग के सभी प्रकार के परिवर्तन – चाहे त्वरण हो या मंदन या उसकी दिशा में परिवर्तन – निरपेक्ष अर्थ रखते हैं और किस जड़त्व-फ्रेम में हम गति का प्रेक्षण करते हैं उस पर निर्भर नहीं करता।

अध्याय 3

प्रकाश की त्रासदी

प्रकाश तत्काल नहीं फैलता

हम गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत और असंख्य 'स्थिर' प्रयोगशालाओं के अस्तित्व को सिद्ध कर चुके हैं। 'स्थिर' प्रयोगशालाओं में पिंडों की गति के नियम एक दूसरे से भिन्न नहीं होते। लेकिन एक ऐसी गति भी है जो प्रथम दृष्टि में सापेक्षिकता-सिद्धांत से मेल नहीं रखती। यह है – प्रकाश का प्रसरण।

प्रकाश का प्रसरण क्षणिक नहीं होता हालांकि उसका वेग बहुत विराट है – 300 000 किलोमीटर प्रति सेकेंड। ऐसे विराट वेग की कल्पना करना कठिन है क्योंकि हमारे दैनंदिन जीवन में हमारा वास्ता इससे कम वेगों से ही पड़ता है। उदाहरणार्थ, सोवियत अंतरिक्ष-राकेट का वेग केवल 12 किलोमीटर प्रति सेकेंड ही होता है। हमारे काम पड़ने वाले सभी पिंडों के वेगों में से सूर्य के गिर्द पृथ्वी के घूर्णन का वेग सबसे तीव्र होता है। पर यह अधिकतम वेग केवल 30 कि. मी. प्रति सेकेंड ही है।

क्या प्रकाश का वेग बदला जा सकता है?

प्रकाश के फैलाव का बृहत् वेग स्वयं कोई इतना विशेष अनोखा नहीं है। आश्चर्यजनक बात तो यह

है कि यह वेग पूर्णतया अपरिवर्तनीय है। किसी भी पिंड का वेग हमेशा कृत्रिम तौर पर बढ़ाया या घटाया जा सकता है। यहां तक कि गोली का भी। दागी गयी गोली के रास्ते में रेत की बोरी रखें। बोरी को छेदकर गोली के वेग का अंश खो जायेगा तथा गोली पहले से धीरे चलेगी। प्रकाश की स्थिति बिल्कुल भिन्न है। जहां गोली की गति राइफल की बनावट और गोली के चूर्ण पर निर्भर करती है वहां प्रकाश की गति उसके सभी स्रोतों के लिये एक समान होती है।

प्रकाशीय किरणों के पथ में एक शीशे का प्लेट रखें। चूंकि शीशे में प्रकाश का वेग निर्वात की अपेक्षा कम होता है, इसीलिये उसमें किरण पहले से धीरे चलेगी। यद्यपि, शीशे से गुजर कर, प्रकाश फिर 300 000 कि. मी. प्रति सेकेंड का वेग प्राप्त कर लेगा। निर्वात में प्रकाश का प्रसरण अन्य सभी वेगों से भिन्न होता है। उसको कम या तेज नहीं किया जा सकता और यह उसका एक महत्त्वपूर्ण गुण है। प्रकाश की किरणें चाहे किसी प्रकार के पदार्थ से गुजरें, पर निर्वात में आते ही उसका प्रसरण पूर्व वेग से होने लगता है।

प्रकाश और ध्वनि

इस पहलू में प्रकाश का प्रसरण साधारण पिंडों की गति की तरह नहीं बल्कि ध्वनि के प्रसरण की संवृत्ति जैसा होता है। ध्वनि उस माध्यम की दोलन गति है जिसमें उसका प्रसरण होता है। इसलिये उसका

वेग माध्यम के गुणों से आंका जाता है न कि ध्वनि के स्रोत से: ध्वनि के वेग को, प्रकाश की गति की तरह कम या तेज करना असंभव है चाहे ध्वनि को किसी पिंड से किसी प्रकार गुजारा जाये।

उदाहरणार्थ, यदि ध्वनि के प्रसरण के पथ में धातु का व्यवधान रखा जाये तो वह इस व्यवधान के अंदर अपने वेग को बदल देगी। परंतु ज्योंही वह प्रारंभिक माध्यम में वापस आयेगी त्योंही वह प्रारंभिक वेग से चलने लगेगी।

वायु-पंप की टोपी के नीचे विद्युत बल्ब और विद्युत घंटी लगायें और फिर टोपी से वायु निकालना आरंभ करें। घंटी की ध्वनि तबतक धीमी पड़ती जायेगी जबतक पूर्ण रूप से सुनाई देना बंद न हो जाये, पर बल्ब पहले की तरह प्रकाश देता रहेगा।

इस प्रयोग से सर्वथा स्पष्ट है कि ध्वनि केवल भौतिक माध्यम में ही प्रसरित होती है परंतु प्रकाश निर्वात में भी प्रसरित होता है। इस प्रकार उनके बीच महत्त्वपूर्ण अंतर है।

गति का सापेक्षिकता-सिद्धांत डाँवाडोल है

निर्वात में प्रकाश के विराट, लेकिन सांत वेग के कारण ही गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत के साथ द्वंद्व शुरू हो गया।

मान लीजिये एक गाड़ी 240 000 कि. मी. प्रति

से. के विशाल वेग से चल रही है। मान लीजिये हम गाड़ी के सबसे अगले डब्बे में बैठे हैं और उसके सबसे पिछले डब्बे में बल्ब जल रहा है। कल्पना कीजिये कि प्रकाश द्वारा गाड़ी के एक सिरे से दूसरे तक पहुँचने के समय को नापने के परिणाम कैसे हो सकते हैं।

लगता है कि यह समय रुकी हुई गाड़ी में प्राप्त समय से भिन्न होना चाहिये। पर वास्तव में, 240 000 कि. मी. प्रति से. के वेग से गतिमान गाड़ी के सापेक्ष प्रकाश का वेग (गाड़ी की गति की दिशा में) केवल 300 000 — 240 000 = 60 000 कि. मी. प्रति से. ही होना चाहिये था। यह ऐसा है जैसे प्रकाश प्रथम डब्बे की सम्मुख दिवार को पकड़ता हो और वह उससे दूर भागी जा रही हो। यदि गाड़ी के सबसे अगले सिरे में बल्ब लगायी जाये और गाड़ी के सबसे पिछले सिरे तक प्रकाश के पहुंचने का आवश्यक समय मापा जाये, तो गाड़ी की गति के विपरीत दिशा में प्रकाश का वेग 240 000 + + 300 000 = 540 000 कि. मी. प्रति से. होना चाहिये। (प्रकाश और सबसे पिछला डब्बा एक दूसरे की तरफ चलते हैं।)

इस प्रकार यह स्पष्ट लगता है कि गतिमान गाड़ी में प्रकाश का भिन्न दिशाओं में भिन्न वेगों से प्रसरण होना चाहिये और विरामस्थ गाड़ी में उसका वेग दोनों दिशाओं में बराबर होना चाहिये।

गोली के साथ बात सर्वथा दूसरी होती है चाहे हम गाड़ी की गति की दिशा में गोली दागें या उसके विपरीत, गोली का वेग गाड़ी की दिवारों के सापेक्ष हमेशा एक जैसा बराबर होगा जो स्थिर गाड़ी में गोली की उड़ान के वेग के बराबर होगा।

कारण यह है कि गोली का वेग राइफल के वेग पर निर्भर करता है। परंतु प्रकाश का वेग जैसा हमने पहले कहा है बल्ब के स्थानांतरण की दर में परिवर्तन से नहीं बदलता।

हमारे तर्क मानो कि स्पष्टतया सिद्ध करते हैं कि प्रकाश के प्रसरण और गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत के बीच तीखे अंतर्विरोध हैं। एक तरफ तो विराम और गतिमान गाड़ी में गोली डब्बे की दिवारों के सापेक्ष समान वेग से उड़ती है, दूसरी तरफ, 240 000 कि. मी. प्रति से. के वेग से चलती गाड़ी में प्रकाश का प्रसरण स्पष्टतया एक दिशा में 5 गुना मंद है और दूसरी तरफ 1.8 गुना तेज (स्थिर गाड़ी की अपेक्षा) है।

ऐसा प्रतीत होता है कि प्रकाश-प्रसरण के अध्ययन से हम गतिमान गाड़ी के निरपेक्ष वेग की स्थापना कर सकेंगे।

ऐसी प्रयोगशाला जिसमें 300 000 कि. मी. प्रति से. के स्थिर वेग से प्रकाश सभी दिशाओं में प्रसरित होता है, निरपेक्ष विरामावस्था में कही जा सकती है। किसी दूसरी प्रयोगशाला में, जो समरूप गति से

सरल रेखा पर पहली की अपेक्षा गतिमान है, प्रकाश का वेग भिन्न दिशाओं में भिन्न होना चाहिये। इससे निष्कर्ष निकलता है कि न तो गति की सापेक्षिकता रह जाती है, न वेग की, और न ही विरामावस्था की (जिसे हमने ऊपर स्थापित किया है)।

"विश्वव्याप्त ईथर"

इस बात को कैसे समझा जाये? प्रकाश और ध्वनि के प्रसरण की संवृत्तियों में सादृश्य के उपयोग से भौतिकविदों ने एक समय ईथर नामक एक विशेष माध्यम की परिकल्पना की, जिसमें प्रकाश उसी तरह प्रसरण करता है जैसे वायु में ध्वनि। साथ-साथ उन्होंने यह भी माना कि ईथर में गतिमान पिंड ईथर को कभी ऐसे नहीं खींचता जैसे पानी में तैरता हुआ लकड़ी का पिंजड़ा अपने साथ पानी को नहीं खींचता।

यदि हमारी गाड़ी ईथर के सापेक्ष स्थिर है तो प्रकाश का प्रसरण सभी दिशाओं में समान वेग से होगा। ईथर के सापेक्ष गाड़ी की गति इसमें व्यक्त हो जायेगी कि प्रकाश का प्रसरण भिन्न दिशाओं में भिन्न होगा।

लेकिन ईथर जैसे माध्यम को बीच में लाने से, जिसका कंपन प्रकाश के रूप में प्रकट होता है, अनेक ऐसे प्रश्न उठने लगते हैं, जिनका उत्तर नहीं मिलता। सर्वप्रथम, स्वयं परिकल्पना ही स्पष्टतः कृत्रिम है। वास्तव में वायु के गुणों का अध्ययन हम उसमें केवल

ध्वनि-प्रसरण के प्रेक्षण से ही नहीं करते, बल्कि विभिन्न भौतिकीय और रासायनिक शोध-विधियों से भी करते हैं। लेकिन ईथर किन्हीं रहस्यमय कारणों से अधिकांश संवृत्तियों में कोई भाग नहीं लेता। वायु के घनत्व और दाब बहुत स्थूल मापों से भी ज्ञात किये जा सकते हैं। परंतु ईथर के दाब और घनत्व के बारे में कुछ भी जान पाने की सारी कोशिशें निष्फल रहीं।

स्थिति काफी बेतुकी हो गयी।

निस्संदेह, आवश्यक गुणों से संपन्न कोई विशेष तरल काम में लाने द्वारा प्रकृति की कोई भी संवृत्ति 'समझायी' जा सकती है। परंतु एक संवृत्ति के सही सिद्धांत और पंडिताऊ शैली में सुविदित तथ्यों की सामान्य व्याख्या में अंतर इसी बात में है कि सिद्धांत कहीं अधिक दूरगामी निष्कर्ष दे सकते हैं, बनिस्बत कि स्वयं तथ्य, जिनपर सिद्धांत आधारित होता है। उदाहरण के लिये परमाणु की अवधारणा लीजिये। रसायन की समस्याओं को हल करने के लिये वह विज्ञान में लायी गयी थी, परंतु उसकी सहायता से हम बहुसंख्य संवृत्तियों की व्याख्या और भविष्यवाणी कर सके, हालांकि ऐसी संवृत्तियों का रसायन से कोई संबंध नहीं है।

ईथर की अवधारणा को हम ऐसी व्याख्या के समान कहेंगे जो कोई जंगली आदमी ग्रामोफोन बजने
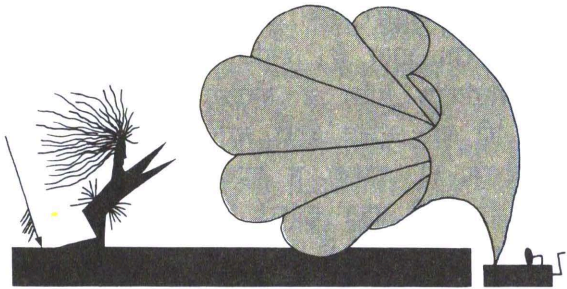
पर देगा – यह मानकर कि इस अजीब डिब्बे में कोई विशेष आत्मा, 'ग्रामोफोन की आत्मा', बंद है।

स्पष्ट है कि ऐसी व्याख्या से कुछ भी समझाया नहीं जा सकता।

इस तरह के कड़वे अनुभव भौतिकविदों को ईथर के पहले भी प्राप्त हुए थे: एक समय था, जब वे दहन की क्रिया को एक विशेष तरल फ्लोगिस्टन तथा तापीय संवृत्तियों को एक अन्य तरल – ऊश्जन – के गुणों द्वारा समझाया करते थे। स्मरणीय है कि ईथर की तरह ये दोनों तरल भी अनुभवातीत थे।

कठिन स्थिति उत्पन्न हो गयी

परंतु सबसे मुख्य कठिनाई यह है कि प्रकाश द्वारा गति के सापेक्षिकता-सिद्धांतों के उल्लंघन से सभी अन्य पिंडों की गति द्वारा भी सापेक्षिकता-सिद्धांतों का उल्लंघन होना चाहिये था।

वस्तुतः आखिर हर माध्यम से पिंडों की गति पर प्रतिरोध होता है। इसलिये ईथर में भी पिंडों के स्थानांतरण घर्षण से संबंधित होने चाहिये थे। पिंडों की गति मंदित होनी चाहिये थी, जो आखिर में विराम की अवस्था में बदल जानी चाहिये थी। फिर भी पृथ्वी बहुत हजारों मिलियन वर्ष पहले से (भूविज्ञान के तथ्यों से) सूर्य के गिर्द घूमती है पर घर्षण से उसके मंद होने का कोई लक्षण नहीं दिखता।

इस प्रकार, गतिमान गाड़ी में प्रकाश के विचित्र व्यवहार को ईथर की उपस्थिति द्वारा समझाने के प्रयत्न से आगे की खोज के रास्ते बंद हो गये। ईथर की अवधारणा प्रकाश द्वारा सापेक्षिकता-सिद्धांत के उल्लंघन और अन्य गतियों द्वारा उसके पालन जैसे विरोधाभास की स्थिति को दूर नहीं करती।

हल प्रयोग से निकलना चाहिये

इन अन्तर्विरोधों का क्या किया जाये? ऐसे अवसर पर कोई व्याख्या देने से पहले निम्न परिस्थि-तियों पर ध्यान दें।

प्रकाश के प्रसरण और गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत के बीच अन्तर्विरोध हमें सिर्फ तर्कणा-विधि से प्राप्त हुआ है।

फिर भी हम दुहरा कर कह सकते हैं कि ये तर्क बिल्कुल सही हैं। लेकिन सिर्फ तर्कों से अपने को बांध कर हम अपनी हालत प्राचीन दार्शनिकों की भाँति

बना लेते हैं, जो प्रकृति के नियम अपने सर के अंदर ही खोजने का प्रयत्न करते थे। इससे अनिवार्यतः यह खतरा उत्पन्न होता है कि विश्व का इस तरह से बनाया गया चित्र वास्तविक विश्व से भिन्न होगा।

भौतिकी के किसी भी सिद्धांत का सर्वोत्तम पारखी प्रयोग होता है। गतिमान गाड़ी में प्रकाश का प्रसरण कैसे होना चाहिये – ऐसे तर्कों से सीमित न हो कर, प्रयोगों की ओर ध्यान देना चाहिये जो यह दिखायेंगे कि इन स्थितियों में प्रकाश का प्रसरण वास्तव में कैसा होता है।

ऐसा एक प्रयोग हमारे लिये सरल है, क्योंकि हम स्वयं एक गतिमान पिंड पर रहते हैं। सूर्य की परिक्रमा में रत पृथ्वी किसी भी तरह सरलरेखीय गति नहीं करती और इसलिये किसी अन्य प्रयोगशाला के सापेक्ष स्थायी विरामावस्था में नहीं हो सकती।

यदि आरंभ में ऐसी प्रयोगशाला ली भी जाये जिसके सापेक्ष पृथ्वी जनवरी में विरामावस्था में होती है तो चूंकि सूर्य के गिर्द पृथ्वी की गति की दिशा बदलती रहती है, इसीलिये वह जुलाई में गत्यावस्था में होगी। इसलिये पृथ्वी पर प्रकाश के प्रसरण का अध्ययन करने का उद्देश्य रखते हुए हम वास्तव में प्रकाश के प्रसरण का अध्ययन एक गतिमान प्रयोगशाला में कर रहे हैं; इसके अतिरिक्त हमारी परिस्थितियों में इस प्रयोगशाला का वेग अधिकतम है – 30 कि. मी. प्रति से.। (पृथ्वी का उसके अक्ष के

गिर्द घूर्णन इस वेग में आधा कि. मी. प्रति सेकेंड का अंतर उत्पन्न करता है, जिसकी हम उपेक्षा कर सकते हैं)।

प्रश्न उठता है: क्या हम पृथ्वी की बराबरी गतिमान रेलगाड़ी के साथ कर सकते हैं, जिसकी ऊपर चर्चा चली थी और जिसके कारण हम अपनी खोज आगे नहीं बढ़ा पा रहे थे? रेलगाड़ी सरल रेखा पर समरूप गति से चल रही थी और पृथ्वी वृत्ताकार पथ पर चल रही है। फिर भी हम पृथ्वी की बराबरी रेलगाड़ी के साथ कर सकते हैं। प्रयोगशाला के उपकरणों से प्रकाश को गुजरने में सेकेंड के जिस क्षुद्रांश की आवश्यकता होती है, वह इतना छोटा होता है कि उस अंतराल में पृथ्वी को पूर्णतया समरूपता से सरल रेखा पर गतिमान मानना गलत नहीं होगा। त्रुटि इतनी लघु होगी कि उसका पता भी नहीं चलेगा।

लेकिन जब हम पृथ्वी की तुलना रेलगाड़ी के साथ कर रहे हैं, तो यह आशा करना अस्वाभाविक नहीं होगा कि पृथ्वी पर भी प्रकाश का आचरण वैसा ही होगा, जैसा रेलगाड़ी में: भिन्न दिशाओं में उसका प्रसर-वेग असमान होगा।

सापेक्षिकता-सिद्धांत की विजय

ऐसा प्रयोग पिछली शती के महान प्रयोगकर्ता माइकेल्सन ने 1881 में संपन्न किया। उन्होंने पृथ्वी के सापेक्ष प्रकाश के वेग को उसकी विभिन्न दिशाओं

में पर्याप्त उच्च शुद्धता से मापा। वेगों के छोटे अंतर को पकड़ने के लिये उन्हें बहुत सूक्ष्म प्रायोगिक तकनीक का उपयोग करना पड़ा था और इस में उन्हें बहुत अक्ल लगानी पड़ी थी। प्रयोग की शुद्धता इतनी अधिक थी कि वेगों के अनुमानातीत सूक्ष्म अंतर को भी ज्ञात किया जा सकता था। माइकेल्सन का प्रयोग उस समय से बिल्कुल भिन्न स्थितियों में दोहराया जाता रहा है जिससे सर्वथा अप्रत्याशित परिणाम सामने आये। पता चला कि गतिमान प्रयोगशाला में प्रकाश का प्रसरण वास्तव में बिल्कुल दूसरे ढंग से होता है, वैसे नहीं जैसे हमने तर्कणा से पहले सिद्ध किया था। माइकेल्सन ने यह ज्ञात किया कि गतिमान पृथ्वी पर प्रकाश सभी दिशाओं में सर्वथा समान वेग से प्रसरित होता है। इस दृष्टि से प्रकाश का प्रसरण ऐसे ही होता है जैसे गोली की उड़ान – फ्रेम की गति से स्वतंत्र। उसका वेग फ्रेम की दिवारों के सापेक्ष सभी दिशाओं में समान है।

इस प्रकार, माइकेल्सन के प्रयोग से सिद्ध हुआ कि प्रकाश के प्रसरण की संवृत्ति, हमारे निष्कर्ष के विरुद्ध गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत का बिल्कुल विरोध नहीं करता; उलटा, पूर्णतया उसके अनुरूप होता है। दूसरे शब्दों में, पृष्ठ 34 पर के हमारे तर्क गलत साबित हुए।

आसमान से गिरा, खजूर में लटका

इस तरह प्रयोग ने प्रकाश-प्रसरण के सिद्धांत और सापेक्षिकता-सिद्धांत के भारी अंतर्विरोध से हमें मुक्ति दिला दी। अंतर्विरोध सिर्फ विरोधाभास सिद्ध हुआ, जो स्पष्टतः सिर्फ हमारे गलत तर्कों की उपज था। तर्क में गलती क्या थी?

1881 से 1905 तक, लगभग चौथाई शती, दुनिया भर के भौतिकविद इस प्रश्न पर माथा-पच्ची करते रहे, लेकिन जितनी भी व्याख्याएं पेश की गयीं, उनसे सिद्धांत और प्रयोगों के बीच नये-नये विरोध उत्पन्न होते रहे।

यदि ध्वनि का स्रोत और प्रेक्षक पतली सींकों से बने गतिमान पिंजरे में स्थानांतरित होंगे, तो प्रेक्षक तेज हवा महसूस करेगा। यदि पिंजरे के सापेक्ष ध्वनि के वेग को मापा जाये तो गति की दिशा में वेग, उसकी उल्टी दिशा से कम होगा। फिर भी बंद दरवाजे और खिड़कियों वाली गाड़ी के डब्बे में ध्वनि-स्रोत रखकर ध्वनि के वेग को मापने पर हम देखेंगे कि उसमें ध्वनि का वेग सभी दिशाओं में बराबर है, क्योंकि डब्बे में बंद हवा डब्बे की ही तरह गतिमान रहती है।

यदि हम ध्वनि की बजाय प्रकाश को लें तो माइकेल्सन के प्रयोग की व्याख्या के लिये निम्न बात माननी होगी। व्योम में पृथ्वी की अपनी गति ईथर को गतिहीन नहीं छोड़ती, जैसे सींकों से निर्मित

पिंजरा, जब वह हवा में से गुजरता है। इसके विपरीत, मान लें कि पृथ्वी ईथर को अपने साथ खींचती ले जाती है, अपनी गति में उसके साथ एकाकार हो जाती है। तब माइकेल्सन के प्रयोग का परिणाम बिल्कुल बोधगम्य हो जाता है।

परंतु यह मान्यता अनेक अन्य प्रयोगों के साथ गहरे अंतर्विरोध में है। उदाहरण के लिये नली में प्रकाश का प्रसरण लें, जिसमें पानी बह रहा है। यदि ईथर की धारणा सही होती तो पानी के बहाव की दिशा में प्रकाश के वेग को मापकर, हमें ऐसा वेग मिलता जो स्थिर पानी में प्रकाश के वेग और पानी के बहाव के वेग के योगफल के तुल्य होता। लेकिन प्रत्यक्ष मापों से वेग कम मिलता है, बनिस्बत कि ऐसे तर्क से।

हम इस बिल्कुल विचित्र स्थिति के बारे में पहले ही चर्चा कर चुके हैं: ईथर में से गुजरता हुआ पिंड प्रत्यक्ष घर्षण अनुभव नहीं करता। पर यदि वह केवल ईथर से गुजरता ही नहीं है बल्कि उसको अपने साथ खींचता भी है तो घर्षण पर्याप्त होना चाहिये, जिसका पता चल सके।

इस प्रकार, माइकेल्सन के प्रयोग से अप्रत्याशित परिणाम के उपरांत उत्पन्न अंतर्विरोध से बचने की सभी कोशिशें असफल सिद्ध हुईं।

सारांश निम्न है।

माइकेल्सन का प्रयोग गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत

की सत्यता सामान्य पिंडों की गति के लिये ही नहीं, प्रकाश-प्रसरण की संवृत्ति के लिये भी सिद्ध करता है, अर्थात् यह सिद्ध करता है कि गति का सापेक्षिकता-सिद्धांत प्रकृति में सभी प्रकार की गति-संवृत्तियों के लिये सही है।

जैसा कि हम पहले देख चुके हैं, गति की सापेक्षिकता गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत का प्रत्यक्ष निष्कर्ष है: एक-दूसरे के सापेक्ष गतिमान विभिन्न प्रयोगशालाओं के लिये वेग के मान भिन्न होने चाहियें। लेकिन दूसरी तरफ, प्रकाश का वेग (300 000 कि. मी. प्रति सेकेंड) विभिन्न प्रयोगशालाओं के लिये समान रहता है, इसलिये वह सापेक्षिक नहीं है, निरपेक्ष है।

अध्याय 4

समय सापेक्षिक है

अंतर्विरोध क्या वास्तव में है?

पहली नजर में, हमें लगता है कि हमारा वास्ता शुद्ध तर्कसंगत अंतर्विरोध से पड़ रहा है। भिन्न दिशाओं में प्रकाश-प्रसरण के वेग की स्थिरता, सापेक्षिकता-सिद्धांत की सत्यता का प्रमाण है और इसके साथ ही स्वयं प्रकाश-वेग निरपेक्ष है।

लेकिन पृथ्वी गोल होने के प्रति मध्ययुगीन आदमी का दृष्टिकोण स्मरण करें: उसे गुरुत्व-बल की उपस्थिति और पृथ्वी के गोल रूप के बीच तीव्र अंतर्विरोध दिखता था, क्योंकि ऐसी स्थिति में सभी पिंडों को पृथ्वी से सरकते हुए 'नीचे' आने लगना चाहिये था। परंतु हम ठीक-ठीक जानते हैं कि यहाँ कोई भी तर्कसंगत अंतर्विरोध नहीं है। केवल ऊपर या नीचे की अवधारणाएं निरपेक्ष नहीं, बल्कि सापेक्षिक हैं। ऐसी ही स्थिति प्रकाश के प्रसरण की है। गति के सापेक्षिकता-सिद्धांत और प्रकाश के वेग की निरपेक्षता में तर्कसंगत अंतर्विरोध ढूँढ़ना व्यर्थ होगा। अंतर्विरोध यहां केवल इसलिये उत्पन्न हुआ है, कि हम अनजाने ही अन्य मान्यताओं को भी ग्रहण कर लेते हैं, जैसे मध्ययुगीन लोग पृथ्वी के गोल होने की बात काटने के साथ-साथ ऊपर और नीचे की अवधारणाओं को

निरपेक्ष मान लिया करते थे। ऊपर या नीचे की निरपेक्षता में विश्वास, जो हमारे लिये आज हास्या-स्पद है, अनुभव की संकीर्णता के कारण उत्पन्न हुआ था। उस समय लोग कम यात्रा करते थे और धरातल के केवल बहुत छोटे क्षेत्र से परिचित थे। स्पष्ट है, कि हमारे साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ है, हमने भी अपने संकुचित अनुभव के कारण किसी सापेक्ष अवधारणा को निरपेक्ष मान लिया है। कौन सी अवधारणा है वह?

अपनी गलती पता करने के लिये हम केवल प्रयोग से स्थापित स्थितियों को ही विश्वस्त मानेंगे।
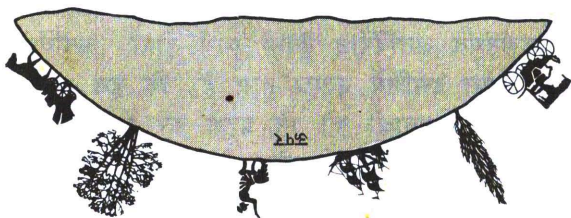
गाड़ी में चलें

कल्पना कीजिये कि 5 400 000 किलोमीटर लंबी और 240 000 किलोमीटर प्रति सेकेंड समान वेग से सरल रेखा पर चलने वाली एक गाड़ी है।

मान लीजिये कि समय के किसी क्षण में गाड़ी के मध्य में बिजली का बल्ब जल उठा। आगे और पीछे के डब्बों में स्वचल दरवाजे लगे हैं, जो उस क्षण खुलते हैं जब उनपर प्रकाश पड़ता है। गाड़ी में और प्लेटफार्म पर लोग क्या देखेंगे? जैसा कि हम तय कर चुके हैं इस प्रश्न का उत्तर देते हुए केवल प्रयोगों से परखे हुए तथ्यों का उपयोग करें।

गाड़ी के मध्य में बैठे लोगों को क्या दिखेगा? माइकेल्सन के प्रयोगानुसार प्रकाश चूंकि गाड़ी के सापेक्ष सभी दिशाओं में एक समान वेग 300 000 कि. मी. प्रति सेकेंड से प्रसरित होता है, इसलिये वह आगे और पीछे के डब्बों तक एक ही समय 9 सेकेंड 2 700 000 : 300 000 बाद पहुंचेगा और दोनों दर-वाजे एक साथ खुल जायेंगे।

प्लेटफार्म पर खड़े लोगों को क्या दिखेगा? स्टेशन के सापेक्ष भी प्रकाश 300 000 कि. मी. प्रति से. के वेग से प्रसरित होता है। परंतु पिछला डब्बा उस दिशा में बढ़ रहा है, जिधर से प्रकाश की किरण आ रही है, अतः पिछले डब्बे से प्रकाश का मिलन $\frac{2\,700\,000}{300\,000 + 240\,000} = 5$ सेकेंड में होगा। आगे

का डब्बा आगे की ओर भागता है और प्रकाश-किरणें उसे पकडने को दौड़ती हैं ; वे केवल $\frac{2\ 700\ 000}{300\ 000 - 240\ 000} = 45$ सेकेंड में उस तक पहुँच सकेंगी। इस प्रकार प्लेटफार्म पर खड़े लोगों को दिखेगा कि गाड़ी के दरवाजे एकसाथ नहीं खुलते। पिछला दरवाजा पहले खुलता है और केवल 45 — 5 = 40 सेकेंड बाद अगला दरवाजा खुलता है*।

इस तरह, दो सदृश घटनाएं – गाड़ी के अगले और पिछले दरवाजों का खुलना – गाड़ी में बैठे लोगों को एक साथ घटती दिखेंगी और प्लेटफार्म पर खड़े लोगों को – 40 सेकेंड के अंतराल पर।

'सामान्य बुद्धि' कलंकित

क्या इसमें कोई अंतर्विरोध है? क्या यह तथ्य ऐसा ही बेतुका नहीं है, जैसे घड़ियाल की लंबाई पूँछ से सिर तक दो मीटर है और सिर से पूँछ तक एक मीटर है?

यह सोचने की कोशिश करें कि प्राप्त परिणाम इतना निरर्थक क्यों लगता है, यद्यपि वह प्रायोगिक तथ्यों से पूर्ण सहमति में है। परंतु हम चाहे कितना भी क्यों न सोचें, हमें इस बात में कोई तार्किक अंत-

---

* आगे इन बातों को और भी शुद्ध रूप में प्रस्तुत किया जायेगा (पृ. 76 पर)।

र्विरोध नहीं मिलेगा कि दो घटनाएं, जो गाड़ी में लोगों के लिये एक ही साथ घटी हैं, प्लेटफार्म पर खड़े लोगों के लिये 40 सेकेंड के अंतराल में घटती हैं।

स्वयं को सांत्वना देने के लिये हम इतना ही कह सकते हैं कि हमारे निष्कर्ष 'सामान्य बुद्धि' का विरोध करते हैं।

पृथ्वी की सूर्य के गिर्द परिक्रमा की सत्यता से मध्ययुगीन व्यक्ति की 'सामान्य बुद्धि' के विरोध की याद करें। सचमुच, सभी दैनंदिन प्रयोग मध्ययुगीन व्यक्ति को अकाट्य प्रामाणिकता से बताते थे कि पृथ्वी स्थिर है और सूर्य उसके गिर्द घूमता है। और क्या पृथ्वी के गोल होने की असंभाव्यता की पहले बतायी गयी दलील का श्रेय भी सामान्य बुद्धि को नहीं जाता?

'सामान्य बुद्धि' की वास्तविक तथ्य के साथ टक्कर की हँसी एक चुटकुले में उड़ायी गयी है, जिसमें एक किसान चिड़ियाघर में पहली बार जिराफ को देख कर विस्मय से चीख पड़ा था: "यह नहीं हो सकता!"

ऐसी सामान्य बुद्धि दैनंदिन जीवन में संस्थापित हमारी कल्पनाओं और आदतों के साधारण सामान्यीकरण से भिन्न नहीं होती।

यह समझ का एक नियत स्तर है जो अनुभव के स्तर को दर्शाता है।

गाड़ी पर एक ही साथ घटने वाली दो घटनाएं, प्लेटफार्म से 40 सेकेंड के अंतराल पर घटित होती
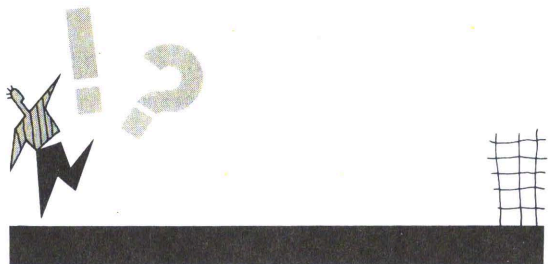
दिखती हैं – यह समझने में वैसी ही कठिनाई है जैसी ग्वाले के साथ जिराफ को पहली बार देखने पर हुई थी। ग्वाले ने ऐसा पशु कभी नहीं देखा था ; ठीक उसी तरह हमने भी 240 000 किलोमीटर प्रति सेकेंड जैसे वेग से कभी यात्रा नहीं की है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि भौतिकविदों का ऐसे बड़े वेगों से सामना होता है, क्योंकि वे ऐसे तथ्यों का प्रेक्षण करते हैं जो हमारे दैनंदिन जीवन की घटनाओं से काफी भिन्न होते हैं।

माइकेल्सन के प्रयोगों के अप्रत्याशित परिणामों ने भौतिकविदों के समक्ष नये तथ्य प्रस्तुत किये और उन्हें 'सामान्य बुद्धि' के बावजूद दो घटनाओं के एक साथ घटने जैसी सामान्य अवधारणा का भी पुनर्निरीक्षण करना पड़ा, जिसके हम दैनंदिन जीवन में आदी हो चुके हैं।

निस्संदेह, हम 'सामान्य बुद्धि' से चिपके रह कर नयी संवृत्तियों की उपस्थिति से इन्कार कर दे
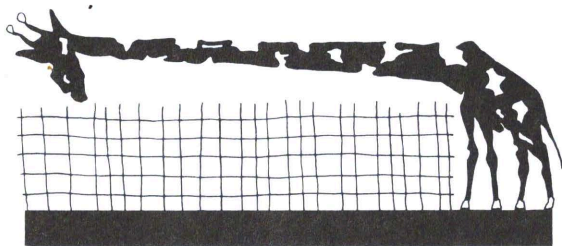
सकते हैं, लेकिन इस स्थिति में हमारी हालत चुटकुले के ग्वाले की तरह ही हो जायेगी।

समय व्योम का भागी है

विज्ञान 'सामान्य बुद्धि' से टकराने में डरता नहीं है। विज्ञान को वर्तमान धारणाओं और नये प्रायोगिक तथ्यों के बीच असहमति का अधिक भय है और यदि कभी ऐसा होता है तो विज्ञान इन धारणाओं को नष्ट कर के हमारे ज्ञान को अधिक ऊँचे स्तर पर पहुँचाता है।

हमने मान रखा था कि एक साथ घटित दो घटनाएं हर प्रयोगशाला में एक साथ घंटती दिखेंगी। प्रयोगों ने हमें एक अन्य निष्कर्ष पर पहुँचाया। पता चला कि यह तभी सही है, जब प्रयोगशालाएं एक-दूसरे के सापेक्ष विरामावस्था में हैं। यदि एक प्रयोगशाला दूसरी के सापेक्ष गतिमान है, तो एक में साथ-साथ

घटने वाली दो समकालिक घटनाएं दूसरी में विषम-कालिक होंगी। समकालिकता एक सापेक्षिक अवधारणा में परिणत हो जाती है; वह तभी अर्थ रखती है, जब यह निर्दिष्ट किया जाता है कि जिस प्रयोगशाला में वह प्रेक्षित होती है उसकी गति कैसी है।

उन कोणिक दूरियों की सापेक्षिकता के उदाहरणों को याद करें, जिनके बारे में हमने पृष्ठ 14 पर बताया था। उसमें क्या बात थी? मान लें कि पृथ्वी से प्रेक्षित दो सितारों के बीच की कोणिक दूरी शून्य है, क्योंकि दोनों पृथ्वी के साथ एक ही सरल रेखा पर हैं। उनके बीच की कोणिक दूरी शून्य है – इस कथन को परम मान लेने पर भी हमें दैनंदिन जीवन में किसी भी अंतर्विरोध का सामना नहीं करना पड़ेगा। लेकिन यदि हम सौर मंडल की सीमा से बाहर चले जायेंगे और व्योम के किसी बिल्कुल भिन्न बिंदु से इन सितारों का प्रेक्षण करेंगे, तो बात बिल्कुल दूसरी होगी: उनके बीच कोणिक दूरी शून्य से भिन्न होगी।

पृथ्वी से प्रेक्षण करने पर जो दो तारे परस्पर संपात करते हैं, व्योम के अन्य बिंदु से प्रेक्षण करने पर संपात नहीं भी कर सकते हैं – यह तथ्य, जो आधुनिक आदमी की दृष्टि में बिल्कुल स्पष्ट है, किसी मध्ययुगीन आदमी को, जो आकाश को सितारों से सजा हुआ एक गुंबज मानता है, बिल्कुल बेतुका लगेगा।

मान लें कि यह पूछा जाता है: यदि प्रयोगशालाओं की बात बिल्कुल छोड़ दें, तो वास्तविकता में दो

घटनाएं समकालिक होंगी या नहीं? यह प्रश्न उतना ही निरर्थक है, जितना निम्न प्रश्न : यदि प्रेक्षण-बिंदु की बात छोड़ दें, तो क्या यह कहा जा सकता है कि दो तारे एक सीध में हैं? यही तो बात है कि जिस प्रकार दो तारों का एक सीध में होना सिर्फ उनकी पारस्परिक स्थितियों पर ही नहीं निर्भर करता, बल्कि उनके सापेक्ष प्रेक्षण-बिंदु की स्थिति पर भी निर्भर करता है, ठीक उसी प्रकार दो घटनाओं की समकालिकता सिर्फ दोनों घटनाओं से ही नहीं, उस प्रयोगशाला से भी संबंधित है, जहां से प्रेक्षण हो रहा है।

जबतक हम प्रकाश-वेग की तुलना में बहुत छोटे वेगों की दुनिया में थे, हम समकालिकता जैसी अवधा-रणा की सापेक्षिकता नहीं देख पाते थे। सिर्फ प्रकाश-वेग के साथ तुलनीय वेगों के अध्ययन के सिलसिले में ही हमें समकालिकता की अवधारणा पर पुनर्विचार करना पड़ा।

ठीक इसी तरह लोग ऊपर और नीचे की अवधार-णाओं पर पुनर्विचार करने को विवश हो गये थे, जब वे पृथ्वी के साथ तुलनीय दूरियों की यात्रा करने लगे थे। इसके पहले चपटी पृथ्वी जैसी धारणा का अनुभव के साथ विरोध संभव नहीं था।

यह सही है कि खुद हम प्रकाश-वेग से गति नहीं कर सकते और इसीलिये उपरोक्त विरोधाभासयुक्त तथ्यों का निजी तौर पर अनुभव नहीं कर सकते।

लेकिन प्रयोग की आधुनिक तकनीक की कृपा से हम इन तथ्यों को विश्वसनीयता के साथ अनेक भौतिकीय संवृत्तियों में देख सकते हैं।

इस तरह काल की भी वही गति हुई, जो व्योम की हुई थी! 'एक ही समय में' जैसी अभिव्यंजना उतनी ही अर्थहीन है, जितनी 'एक ही स्थान पर' जैसी।

हम देखते हैं कि व्योम-दूरी की तरह ही दो घटनाओं के बीच के अंतराल के बारे में कुछ कहने से पहले उस प्रयोगशाला को निर्दिष्ट करना पड़ता है, जिससे प्रेक्षण हो रहा है।

विज्ञान की विजय

समय की सापेक्षिकता जैसे तथ्य की खोज ने आदमी के प्रकृति-संबंधी दृष्टिकोणों में क्रांति ला दी है। पृथ्वी के गोल होने की खोज ने मानव-ज्ञान में जो क्रांति लायी थी, सिर्फ उसी के साथ इसकी तुलना की जा सकती है।

समय की सापेक्षिकता की खोज सन् 1905 ई. में बीसवीं शती के महान भौतिकविद अल्बर्ट आइंसटाइन (1880 — 1955) ने की थी, जिसके कारण उनकी गणना कोपेरनिक और न्यूटन जैसे वैज्ञानिकों में होती है।

व्ला. इ. लेनिन ने अल्बर्ट आइंस्टाइन को प्रकृति-विज्ञान के महान सुधारकों में से एक माना था।

समय की सापेक्षिकता के सिद्धांत और उसके निष्कर्षों को ही अक्सर सापेक्षिकता-सिद्धांत (और भी सही कहें, तो विशिष्ट सापेक्षिकता-सिद्धांत) कहते हैं और यह गति के सापेक्षिकता-नियम से भिन्न है।

वेग की सीमा

द्वितीय महायुद्ध से पूर्व विमानों की गति ध्वनि-वेग से कम थी; अब 'पराध्वनिक' विमान बनने लगे हैं। रेडियो-तरंगें प्रकाश-वेग से प्रसर करती हैं। क्या पराप्रकाशिक टेलीग्राफ बनाया जा सकता है, ताकि सिग्नल प्रकाश से भी अधिक वेग से भेजा जा सके? पता चला कि यह असंभव है।

सचमुच यदि हम सिग्नल अनंत वेग से भेज सकते, तो हम दो घटनाओं की समकालिकता भी एकार्थक रूप से निर्धारित कर लेते। हम कहते कि ये घटनाएं एक साथ घटी हैं, यदि दोनों से सिग्नल अनंत वेग से चल कर हम तक एक साथ पहुंच जाते। इस प्रकार समकालिकता की प्रकृति परम होती और वह उस प्रयोगशाला की गति पर निर्भर नहीं करती, जिससे प्रेक्षण हो रहा है।

पर चूँकि प्रयोग समय के परमत्व का खंडन करते हैं, इसलिये हम निष्कर्ष निकालते हैं कि सिग्नल का प्रेषण क्षणिक नहीं हो सकता। व्योम के एक बिंदु से दूसरे तक किसी क्रिया के संचार का वेग अनंत

नहीं हो सकता, अर्थात् किसी सांत मान से अधिक नहीं हो सकता, जिसे सीमांत वेग कहते हैं।

यह सीमांत वेग प्रकाश-वेग है।

सचमुच, गति की सापेक्षिकता के नियमानुसार एक दूसरे के सापेक्ष समरूपता और ऋजुरैखिकता (सरल रेखिकता) से गतिमान सभी प्रयोगशालाओं में प्रकृति के नियम समान होने चाहियें। कोई भी वेग एक प्रत्त सीमा से अधिक नहीं हो सकता – यह कथन भी प्रकृति का एक नियम है, अतः सीमांत वेग का मान सभी भिन्न प्रयोगशालाओं में भी एकदम बराबर होना चाहिये। हम जानते हैं कि प्रकाश-वेग में भी यह गुण है।

इस प्रकार, प्रकाश-वेग प्रकृति की एक संवृत्ति का सिर्फ प्रसरण-वेग ही नहीं है, वह सीमांत वेग की महत्त्वपूर्ण भूमिका भी निभाता है।

सृष्टि में सीमांत वेग की विद्यमानता का उद्घाटन मानव प्रतिभा और उसकी प्रायोगिक क्षमताओं की महानतम विजय है।

पिछली शती का भौतिकविद यह सोच भी नहीं सकता था कि प्रकृति में सीमांत वेग उपस्थित है और उसकी उपस्थिति को सिद्ध भी किया जा सकता है। यही नहीं, यदि अपने प्रयोगों में उसका सीमांत वेग से कहीं वास्ता पड़ भी जाता, तो वह विश्वास के साथ नहीं कह सकता था कि यह प्रकृति का नियम

है या उसके प्रयोग की कोई कमी, जिसे तकनीकी विकास आगे चल कर दूर कर सकता है।

सापेक्षिकता-सिद्धांत यह दिखाता है कि सीमांत वेग की विद्यमानता एक प्राकृतिक तथ्य है। यह नहीं सोचना चाहिये कि तकनीकी विकास प्रकाश से अधिक बड़ा वेग प्रदान कर सकेगा। यह कुछ ऐसा ही होगा, यदि हम सोचने लगेंगे कि पृथ्वी की सतह पर परस्पर 20 हजार किलोमीटर से अधिक दूर दो बिन्दु नहीं हैं, क्योंकि हमारा ज्ञान बहुत कम है और भूगोल का ज्ञान बढ़ने पर हम पृथ्वी पर इससे भी दूर बिन्दु ढूंढ़ लेंगे। लेकिन वास्तविकता तो यह है कि पृथ्वी की सतह पर परस्पर बीस हजार किलोमीटर से अधिक दूर दो बिन्दु संभव ही नहीं हैं; यह भौगोलिक नियम है।

प्रकृति में प्रकाश-वेग इसीलिये एक असाधारण भूमिका निभाता है, क्योंकि यह किसी भी वस्तु के प्रसरण का सीमांत वेग है। प्रकाश या तो सभी अन्य संवृत्तियों से आगे बढ़ जाता है, या कम से कम उनके साथ-साथ पहुँचता है।

यदि सूरज दो सितारों में विभक्त हो जाता, तो पृथ्वी की गति भी निस्संदेह परिवर्तित हो जाती।

पिछली शताब्दी के भौतिकविद, जिन्हें यह मालूम नहीं था कि प्रकृति में सीमांत वेग विद्यमान है, निस्संदेह यह कल्पना करते कि पृथ्वी की अपनी गति में ठीक उसी क्षण परिवर्तन हुआ है, जिस क्षण सूरज दो सितारों में विभक्त हुआ है। यद्यपि प्रकाश को विभक्त

सूरज से पृथ्वी तक पहुँचने में 8 मिनट लग जाते।

वास्तविकता में पृथ्वी की घूर्णन-गति में परिवर्तन सूरज के विभाजन के 8 मिनट उपरांत आरंभ होता। उस क्षण तक पृथ्वी वैसे ही चलती रहती मानो सूरज विभक्त हुआ ही न हो। इन आठ मिनटों तक सूरज के साथ या उसपर चाहे कोई भी घटना घटे, उसका न तो कोई असर पृथ्वी पर होगा और न ही उसकी गति पर।

सिग्नल-प्रसरण का सीमांत वेग हमें दो घटनाओं की समकालिकता (एक साथ घटने की अवस्था) की स्थापना की संभावना से वंचित नहीं करता। जो कुछ हमें करना है, वह है – सिग्नल के पिछड़ने का समय नोट करना। सामान्यतः हम करते भी यही हैं।

घटना विशेष की समकालिकता स्थापित करने की ऐसी पद्धति बिल्कुल इस धारणा की सापेक्षिकता का विरोध नहीं करती। वास्तव में पिछड़ने का समय घटाने के लिये हमें दो घटनास्थलों के बीच दूरी में सिग्नल-प्रसरण के वेग से भाग देना चाहिये। दूसरी तरफ, जब हमने पहले मास्को-व्लादीवोस्तोक एक्सप्रेस गाड़ी से पत्र भेजने की चर्चा की थी तो हमने देखा था कि व्योम में स्थान अवधारणा भी सर्वथा सापेक्षिक है।

पहले और बाद में

कल्पना करें कि हमारी लैंप वाली गाड़ी में, जिसको हम आईंस्टाइन की गाड़ी कहेंगे, स्वचालित यंत्र खराब हो गया है और गाड़ी में लोगों ने देखा कि आगे का दरवाजा पीछे के दरवाजे की अपेक्षा 15 सेकेंड पहले खुल गया। इसके विपरीत, प्लेटफार्म पर लोग देखेंगे कि पीछे का दरवाजा $40-15=25$ सेकेंड पहले खुला। इस प्रकार जो घटना एक मापतंत्र में पहले हुई, दूसरे में वह बाद में होगी।

हालांकि तुरंत यह विचार उठता है कि 'पहले' और 'बाद में' जैसी धारणाओं की सापेक्षिकता की भी एक सीमा होनी चाहिये। आखिर ऐसा कभी भी संभव नहीं है कि बच्चा माँ से पहले जन्म ले, चाहे किसी भी मापतंत्र से क्यों न प्रेक्षण किया जाये।

माना सूरज पर एक धब्बा बन गया। टेलीस्कोप से प्रेक्षण करने वाले खगोलज्ञ ने इसे 8 मिनट बाद देखा। इसके बाद खगोलज्ञ जो कुछ भी करेगा, धब्बे के प्रकट होने के निरपेक्ष रूप से बाद ही करेगा, चाहे किसी भी प्रयोगशाला से क्यों न प्रेक्षण किया जा रहा हो (सूरज का और इस खगोलज्ञ का)। इसके विपरीत, धब्बा उत्पन्न होने के आठ मिनट पहले खगोलज्ञ के साथ जो कुछ भी होगा (इस तरह कि इस घटना का प्रकाशीय संकेत सूरज पर

धब्बा उत्पन्न होने के पहले प्राप्त हो), वह निरपेक्ष रूप से पूर्वगामी घटना है।

अगर, उदाहरणार्थ, खगोलज्ञ इन सीमाओं के बीच स्थित किसी क्षण चश्मा पहन लेगा, तो धब्बे के प्रकट होने और ऐनक लगाने के बीच सामयिक संबंध कभी निरपेक्ष नहीं होगा।

हम खगोलज्ञ और धब्बे के सापेक्ष ऐसे तरीके से चल सकते हैं कि अपने वेग के मान और दिशा के अनुसार हम खगोलज्ञ को धब्बा उत्पन्न होने के पहले, बाद, या साथ-साथ देख सकें।

इस प्रकार, सापेक्षिकता-सिद्धांत सिद्ध करता है कि घटनाओं के बीच तीन प्रकार का सामयिक संबंध होता है – निरपेक्ष पहले, निरपेक्ष बाद में और "न तो पहले न ही बाद में"। अंतिम, यदि अधिक सही कहें, तो – पहले और बाद का ही संबंध है, जो मापतंत्र पर निर्भर करता है, जहां से प्रेक्षण किया जा रहा है।

अध्याय 5

दिवार-घड़ी और रेखनी के नखरे

पुनः गाड़ी में

रेलवे लाइन असीम लंबी है, जिस पर आईंस्टाइन की गाड़ी चल रही है। दो स्टेशनों के बीच की दूरी 864 000 000 कि. मी. है। 240 000 कि. मी. प्रति से. के वेग से चल रही गाड़ी इस दूरी को एक घंटे में तय कर लेगी।

दोनों ही स्टेशनों पर दीवार-घड़ियां हैं। प्रथम स्टेशन से बैठने वाला यात्री अपनी घड़ी स्टेशन की दीवार-घड़ी से मिला लेता है। दूसरे स्टेशन पर पहुँचकर उसे आश्चर्य होता है कि उसकी घड़ी धीमी चल रही है जबकि घड़ीसाज की दुकान में उसकी घड़ी को अच्छी हालत में बताया गया था।

कारण क्या है?

इसको समझने के लिये मान लीजिये कि यात्री डब्बे के फर्श पर रखे एक टौर्च से भीतरी छत पर प्रकाश किरण भेजता है। छत का दर्पण किरण को वापस टार्च पर परावर्तित करता है। यात्री को दिखने वाला किरण-मार्ग अगले पृष्ठ पर चित्र के ऊपरी भाग में दर्शाया गया है। प्लेटफार्म पर प्रेक्षक को यह मार्ग बिल्कुल भिन्न दिखता है। टॉर्च से दर्पण तक पहुँचने में लगे समय में स्वयं दर्पण गाड़ी की गति के कारण

B
900 000 km
C
D
A
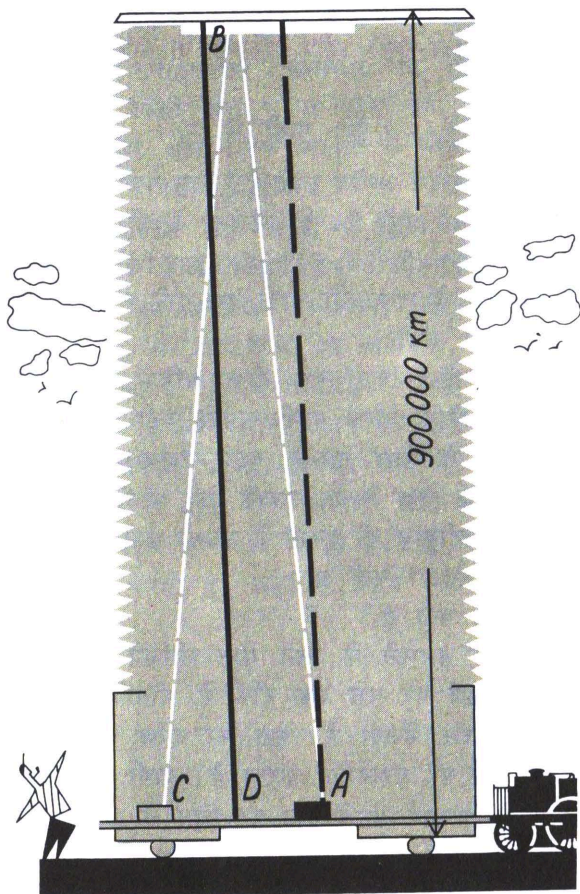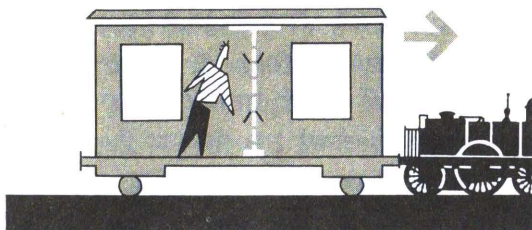
स्थानांतरित हो जाता है। और किरण को टॉर्च तक पहुँचने में लगे समय में स्वयं टॉर्च उसी दूरी तक स्थानांतरित हो जायेगा।

हम देखते हैं कि प्लेटफार्म पर खड़े प्रेक्षक के लिये किरण गाड़ी में स्थित प्रेक्षक की अपेक्षा स्पष्टतया ज्यादा दूरी तक चली है। दूसरी तरफ, हमें ज्ञात है कि प्रकाशीय वेग एक निरपेक्ष वेग है और यह गाड़ी में यात्रा कर रहे और प्लेटफार्म पर खड़े प्रेक्षकों के लिये बराबर है। इसीलिये हम निष्कर्ष निकालते हैं कि स्टेशन पर प्रकाशीय किरण को उसके प्रस्थान और वापसी में गाड़ी की अपेक्षा अधिक समय लगा!

काल-संबंध कलित करना आसान है।

मान लीजिये कि प्लेटफार्म पर प्रेक्षक ने स्थापित किया कि प्रकाशीय किरण के प्रस्थान और वापसी में 10 सेकेंड लगे। इन 10 सेकेंड में किरण $300\ 000 \times 10 = 3\ 000\ 000$ कि. मी. चली। इसीलिये समद्विबाहु त्रिभुज ABC की प्रत्येक भुजा AB और BC 1 500 000 कि. मी. स्पष्टतया होगी। दूरी AC

उस दूरी के बराबर है जो गाड़ी 10 सेकेंड में तय करती है, अर्थात् 240 000 $\times$ 10 $=$ 2 400 000 कि. मी।

अब डब्बे की ऊँचाई ज्ञात करना सुगम है, जो त्रिभुज ABC की ऊँचाई BD के तुल्य है।

समकोण त्रिभुज में कर्ण AB का वर्ग संलंब AD और BD के वर्गों के जोड़ के बराबर है। समीकरण $AB^2 = AD^2 + BD^2$ से हम डब्बे की ऊँचाई $BD = \sqrt{AB^2 - AD^2} = \sqrt{1500\,000^2 - 1200\,000^2} =$ $= 900\,000$ कि. मी. प्राप्त करते हैं। ऊँचाई काफी ठोस है। हालांकि यदि कार्ईस्टाइन की गाड़ी के खगोलीय परिमाणों की ध्यान में रखें तो यह इतनी आश्चर्यजनक भी नहीं।

यात्री के दृष्टिकोण से किरण द्वारा फर्श से छत तक और फिर वापस तय की गयी दूरी स्पष्टतया ऊँचाई ($2 \times 900\,000 = 1\,800\,000$ कि. मी.) से दुगुनी है। इस दूरी को तय करने में किरण को $\frac{1\,800\,000}{300\,000} = 6$ सेकेंड लगेंगे।

दीवार-घड़ी का विरोधाभास

जब स्टेशन पर 10 सेकेंड हुए तो गाड़ी पर – केवल 6 सेकेंड। इसका अर्थ है कि यदि दीवार-घड़ी के अनुसार गाड़ी उसके प्रस्थान के एक घंटे पश्चात पहुँची, तो यात्री की घड़ी के अनुसार यह केवल $60 \times \frac{6}{10} = 36$ मिनट ही चली। अन्यतः, एक घंटे में उसकी घड़ी स्टेशन की दीवार-घड़ी से 24 मिनट पीछे थी।

यह समझना आसान है कि जितनी अधिक चाल गाड़ी की होगी, घड़ी उतनी ही मंद चलेगी।

वास्तव में ज्यों-ज्यों गाड़ी की चाल प्रकाश की चाल के निकट पहुँचती है, त्यों-त्यों गाड़ी का पथ निर्दिष्ट करने वाला संलंब *AD* कर्ण *AB* (किरण द्वारा उसी समय में तय किये गये पथ) के निकट पहुँचता है। परिणामस्वरूप संलंब *BD* और कर्ण *AB* का अनुपात घटता है। लेकिन यह वही अनुपात है, जो गाड़ी के समय और प्लेटफार्म के समय का है। गाड़ी का वेग प्रकाश-वेग के निकट पहुँचाते हुए हम ऐसी अवस्था प्राप्त कर सकते हैं कि स्टेशन पर एक घंटा बीतने पर गाड़ी में बीता अंतराल यथेष्ट अल्प हो। इस प्रकार प्रकाश-वेग का 0.9999 के बराबर गाड़ी का वेग होने पर स्टेशन के एक घंटे के अंतराल के लिये गाड़ी में केवल एक मिनट का अंतराल होगा।

इस प्रकार, सभी गतिशील दीवार-घड़ियां तथा कलाई-घड़ियां स्थिरावस्था की घड़ियों से पीछे रह जाती हैं। क्या यह सापेक्षिकता-सिद्धांत का विरोध नहीं करता, जिसे हमने अपने तर्क का प्रस्थान बिंदु माना था?

क्या इसका अर्थ यह है कि सबसे तेज चलने वाली घड़ी निरपेक्ष विराम की अवस्था में है?

नहीं, क्योंकि गाड़ी की घड़ी और स्टेशन की घड़ियों के बीच तुलना पूर्णतया भिन्न परिस्थितियों

में की गयी थी। वास्तव में घड़ियां दो नहीं, तीन थीं। यात्री ने उपनी घड़ी का समय दो भिन्न स्टेशनों पर दो भिन्न दीवार-घड़ियों से मिलाया था। और इसके विपरीत, यदि गाड़ी के आगे और पीछे के डब्बे में दिवार-घड़ियां होतीं, तो प्रेक्षक को किसी एक स्टेशन पर से वहां की घड़ी के समय को पास से गुजरती गाड़ी के डब्बों में घड़ियों के समय से तुलना करने पर उसे ज्ञात होगा कि स्टेशन की घड़ी हमेशा मंद रहती है।

परंतु दत्त परिस्थितियों में – जब गाड़ी स्टेशन के सापेक्ष सीधी रेखा पर समरूप वेग से गतिमान है – हम गाड़ी को गतिहीन और स्टेशन को गतिशील मान लें, तो भी गलत नहीं होगा। दोनों स्थितियों में लागू होने वाले प्रकृति के नियम समान होने चाहियें।

प्रत्येक प्रेक्षक जो अपनी घड़ी के सापेक्ष गतिहीन है, देखेगा कि अन्य दीवार-घड़ियां जो उसके सापेक्ष गतिमान हैं, तेज चल रही हैं : जितने अधिक उनका वेग है उतनी ही तेजी से उनकी सुइयां चल रही हैं।

यह ऐसी ही स्थिति है, जब टेलीग्राफ के दो खभों में से प्रत्येक के पास खड़ा आदमी यह कहता है कि उसका खंभा आँख से अधिक बड़े कोण पर दिखता है।

समय की मशीन

अब मान लें कि आईंस्टाइन की गाड़ी एक सीधी रेखा की बजाय वृत्ताकार रेल-पथ पर चल रही है।

कुछ समयोपरांत यह फिर उस स्टेशन पर वापस आ जाती है, जहां से चली थी। जैसा हमने पहले निर्धारित किया है, यात्री को लगता है कि उसकी घड़ी सुस्त है, और जितनी तेजी से गाड़ी जायेगी, उसकी अपनी घड़ी उतनी ही और सुस्त होगी। गाड़ी का वेग बढ़ाते-बढ़ाते एक ऐसा क्षण भी आ सकता है, जब यात्री के लिये केवल एक दिन बितेगा जबकि स्टेशन-मास्टर के लिये बहुत वर्ष बीत जायेंगे। वृत्ताकार पथ के प्रस्थान-स्टेशन पर एक दिन बाद (अपनी घड़ी के अनुसार) वापस पहुँचकर हमारा यात्री देखेगा कि उसके सभी रिश्तेदार और परिचित बहुत पहले स्वर्गवासी हो चुके हैं।

यहां स्थिति भिन्न है। दो स्टेशनों के बीच यात्रा करते वक्त यात्री तीन घड़ियों की तुलना करता था। अभी वह सिर्फ दो की तुलना करता है – अपनी और स्टेशन की।

क्या यहां सापेक्षिकता-सिद्धांत के साथ कोई विरोध है? क्या हम मान सकते हैं कि यात्री विरामावस्था में है और प्रस्थान-स्टेशन वृत्ताकार पथ पर आईंस्टाइन की गाड़ी के वेग से चल रहा है? तब हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते कि स्टेशन पर यात्री के लिये एक दिन बीतता है, जबकि गाड़ी में यात्री के लिये बहुत वर्ष बीतते हैं। यह एक गलत निष्कर्ष होता, जिसके कारण निम्न हैं।

ऊपर हमने प्रमाणित किया था कि वही पिंड

स्थिर रहता है, जिस पर कोई बाह्य बल क्रियाशील नहीं रहता। यह सच है कि 'स्थिरावस्था' एक नहीं, अनेक हैं। और जैसा हमें ज्ञात है, विरामावस्था में स्थित दो पिंड एक सरल रेखा पर एक दूसरे के सापेक्ष स्थिर वेग से गतिमान रह सकते हैं। परंतु वृत्ताकार रेल-पथ पर चल रही आईंस्टाइन की गाड़ी में घड़ी अपकेंद्री बल के प्रभाव को महसूस करती है, और इसीलिये हम इसको विरामावस्था में नहीं कह सकते। रेलवे स्टेशन और गाड़ी में घड़ियों के समय के बीच अंतर निरपेक्ष है।

दो आदमी जिनकी घड़ियां समान समय दिखाती हैं यदि वे बिछुड़ जायें और फिर दुबारा मिलें, तो जो स्थिरावस्था में रहा या सरलरेखा पर समरूप वेग से चला, उसकी घड़ी तेज होगी, क्योंकि इसने किसी बल के प्रभाव को महसूस नहीं किया।

प्रकाश-वेग के निकटवर्ती वेग से वृत्ताकार रेल-पथ पर यात्रा सिद्धांततः हमें (सीमित रूप में ही सही) लेखक वेल्स द्वारा कल्पित समय की मशीन का आभास दे सकती है, क्योंकि प्रस्थान-स्टेशन पर उतर कर हमें मालूम होगा कि हम भविष्य में आ पहुँचे हैं। सचमुच, समय की इस मशीन से हम भविष्य में पहुँच सकते हैं, परंतु अतीत में वापस आने से वंचित रहेंगे। आईंस्टाइन की गाड़ी और वेल्स द्वारा कल्पित समय की मशीन में यही बड़ा अंतर है।

भावी वैज्ञानिक प्रगति से हम शायद अतीत की

यात्रा कर सकेंगे, ऐसी आशा करना भी बेकार है। अन्यथा हमें मानना पड़ेगा कि वस्तुतः बेतुकी स्थितियाँ सिद्धांततः संभव होती हैं। वास्तव में, अतीत की ओर रवाना हुए व्यक्ति का असंगत स्थिति में टपक पड़ना भी संभाव्य होगा, जबकि उस समय उसके माँ-बाप भी पैदा नहीं हुए होंगे। परंतु भविष्य की ओर यात्रा में प्रतीयमान अंतर्विरोध के सिवा और कुछ नहीं होता।

सितारों की यात्रा

आकाश में सितारे हमसे इतनी दूर हैं कि इनमें से कुछ तक प्रकाश-किरण को पहुंचने में 40 वर्ष लग जाते हैं। चूंकि हमें पूर्व ज्ञान है कि प्रकाश-वेग से तेज यात्रा करना असंभव है, हम अच्छी तरह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि सितारे तक 40 वर्ष से कम समय पहुंचा नहीं जा सकता। यद्यपि यह निष्कर्ष गलत है, क्योंकि हमने गति से संबंधित समय में परिवर्तन को ध्यान में नहीं रखा।

कल्पना कीजिये कि हम आईंस्टाइन-राकेट में 240 000 कि. मी. प्रति सेकेंड के वेग से उड़ रहे हैं। पृथ्वी के लोगों के लिये सितारे तक की उड़ान में $\frac{300\,000 \cdot 40}{240\,000} = 50$ वर्ष लगेंगे।

परंतु हमारे लिये, रॉकेट में उड़ते हुए, कथित वेग पर उड़ान का समय 10 : 6 के अनुपात में सिकु-

ड़ेगा। परिणामस्वरूप सितारे तक 30 वर्ष में पहुंचेंगे न कि 50 वर्ष में ($\frac{6}{10} \times 50 = 30$ वर्ष)।

आईंस्टाइन-राकेट के वेग को बढ़ाकर, जबतक यह प्रकाश के वेग तक न पहुँच जाये, हम इस उड़ान के समय को यथेष्ट रूप से कम कर सकते हैं। सैद्धांतिक रूप से, काफी बड़े वेग से यात्रा करके हम एक मिनट में सितारे तक जाकर वापस पृथ्वी पर आ सकते हैं! पृथ्वी पर हालांकि इसके दौरान फिर भी 80 वर्ष बीत जायेंगे।

ऐसा लगता है कि इस प्रकार हमारे पास मानव को दीर्घायु करने का आधार हो गया, यद्यपि केवल अन्य लोगों के दृष्टिकोण से, चूंकि मानव 'उसके' अपने समयानुसार वृद्ध होता जाता है। तथापि, खेद है कि यदि सरसरी नजर भी डालें तो यह संभावना अवास्तविक है।

मानव शरीर दीर्घकालीन त्वरण की अवस्था के अनुकूल नहीं है, जो पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण-बल के त्वरण से अधिक है। इसलिये प्रकाश के वेग के निकट गति को प्राप्त करने के लिये दीर्घकाल की आवश्यकता होती है। परिकलनों से प्रमाणित है कि गुरुत्वाकर्षण-बल के बराबर त्वरण से छः महीने की यात्रा में केवल छः सप्ताह की वृद्धि होती है। यदि हम अपनी यात्रा जारी रखें तो समय की वृद्धि तीव्र होगी। राकेट की एक वर्ष की उड़ान से 18 महीने की अतिरिक्त वृद्धि होगी,

1986

2066
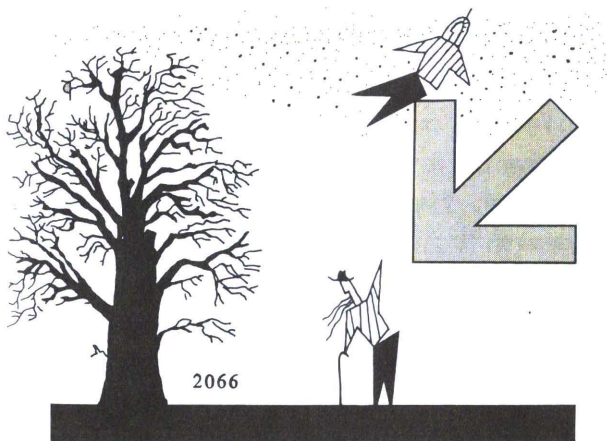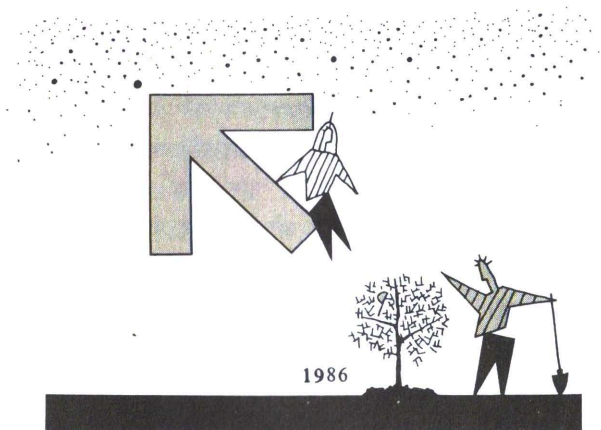
दो वर्ष की यात्रा से 28 वर्ष की वृद्धि होगी, और हमारी 3 वर्ष की राकेट-यात्रा में, पृथ्वी पर 360 वर्ष से अधिक समय बीत जायेगा!

बहुत दिलासा देने वाले आंकड़े लगते हैं, क्या आप नहीं सोचते ?

ऊर्जा की खपत की ओर ध्यान दें तो मामला ठंडा हो जाता है। केवल एक टन के वजन और 260 000 कि. मी. प्रति से. के वेग से (समय को 'दुगुना' करने के लिये आवश्यक वेग, अर्थात्, राकेट में एक वर्ष को पृथ्वी पर दो वर्ष करने के लिये) उड़ने वाले राकेट पर, 250 000 000 000 000 किलो-वाट घंटा (kW ·h) ऊर्जा की खपत होगी। इतनी ऊर्जा का उत्पादन करने के लिये पूरे संसार को बहुत वर्ष लग जायेंगे।

पर यह इतनी ही ऊर्जा है जो राकेट उड़ान में उपयोग करता है। हमें अभी यह गणना भी करना है कि हमारे यान को 260 000 कि. मी. प्रति से. का वेग देने के लिये कितनी ऊर्जा चाहिये। तथापि, उड़ान की समाप्ति पर अंतरिक्ष-यान के सुरक्षित अवतारण के लिये मंदित करना भी आवश्यक है। कितनी ऊर्जा खर्च होगी ?

चाहे यदि हमारे पास संभव उच्चत्तम वेग – प्रकाश के वेग – पर इंजन से पलायित जेट बनाने के लिये काफी ईंधन होता तो भी ऊपर वर्णित परि-माण से यह ऊर्जा 200 गुनी अधिक होती। दूसरे

शब्दों में, हमें उतनी ऊर्जा का उपभोग करना पड़ता जितनी सारी दुनिया कई दशकों में उत्पादित करती है। वास्तव में जेट-पलायन का वेग प्रकाश-वेग की अपेक्षा हजारों गुना कम है, जिससे हमारी कल्पित उड़ान के लिये आवश्यक ऊर्जा आश्चर्यजनक बृहत् बन जाती है।

वस्तुएं सिकुड़ती हैं

जैसा हमने अभी देखा है कि समय वास्तव में एक निरपेक्ष अवधारणा नहीं है। यह सापेक्ष है और इसके लिये इस स्थान का सही निर्देशन होना जरूरी है जहां से प्रेक्षण किया जाता है।

अब हम व्योम की ओर पहुंचते हैं। माइकेल्सन के प्रयोगों से पूर्व हमें पता था कि व्योम सापेक्ष है। व्योम की सापेक्षिकता के बावजूद हमने पिंडों के आकार पर एक निरपेक्ष गुणारोपण किया। दूसरे शब्दों में, हमने उन्हें पिंड के गुण समझा जो प्रेक्षण-स्थान पर निर्भर नहीं होते। फिर भी सापेक्षिकता-सिद्धांत इस मान्यता का भी परित्याग करने के लिये बाध्य करता है। समय निरपेक्ष है जैसी हमारी धारणा के बारे में यह भी एक पूर्वधारणा है जिसकी स्वीकृति का यह कारण है कि हम हमेशा प्रकाश-वेग से अत्यधिक छोटे वेगों से संबंध रखते हैं।

कल्पना कीजिये कि आईंस्टाइन की गाड़ी 2 400 000

किलोमीटर लंबे एक प्लेटफार्म के पास से गुजर रही है। स्टेशन-घड़ी के अनुसार गाड़ी प्लेटफार्म के एक सिरे से दूसरे तक $\frac{2\,400\,000}{240\,000} = 10$ से. में पुहुंच जाती है। परंतु यात्रियों की घड़ी के अनुसार केवल 6 सेकेंड में पहुंचती है। यात्री यह निर्णय करने के लिये पूरी तरह सही होंगे कि प्लेटफार्म 240 000 कि. मी. नहीं बल्कि $240\,000 \times 6 = 1\,440\,000$ कि. मी. लंबा है।

इस प्रकार, प्लेटफार्म के सापेक्ष स्थिर प्रयोगशाला की दृष्टि में प्लेटफार्म की लंबाई अधिक होगी बनिस्बत कि उस प्रयोगशाला की दृष्टि में, जिसके सापेक्ष प्लेटफार्म गतिमान होगा। हर गतिमान पिंड अपनी गति की दिशा में सिकुड़ता है।

लेकिन यह सिकुड़न परम गति का लक्षण नहीं है। जैसे ही हम पिंड के सापेक्ष स्थिर प्रयोगशाला में पहुँचेंगे, वह फिर लंबा हो जायेगा। इस प्रकार, यात्रियों को प्रतीत होगा कि प्लेटफार्म सिकुड़ गया है जबकि प्लेटफार्म पर लोग सोचेंगे कि आईस्टाइन की गाड़ी सिकुड़ गई है (6 : 10 के अनुपात में)।

और यह दृष्टि का धोखा नहीं होगा। पिंड की लंबाई मापने वाले सभी यंत्र यहीं दिखाएंगें।

इस आविष्कार के कारण अब हमें पृष्ठ 50 पर आईस्टाइन की गाड़ी में दरवाजों के खुलने के समय से संबंधित निष्कर्षों में सुधार करना चाहिये। प्लेटफार्म पर प्रेक्षक के दृष्टिकोण से दरवाजों के खुलने के

क्षण का जब हमने कलन किया तो हमने माना था कि गतिमान गाड़ी की लंबाई उतनी ही थी जितनी विरामावस्था गाड़ी की। फिर भी प्लेटफार्म के लोगों के लिये गाड़ी की लंबाई सिकुड़ गयी। इस प्रकार, स्टेशन की घड़ी के दृष्टिकोण से दरवाजों के खुलने के समय का अंतराल वास्तव में केवल $\frac{6}{10} \times 40 = 24$ सेकेंड होगा, न कि 40 सेकेंड।

वेगों के नखरे

रेल-पथ के सापेक्ष यात्री का क्या वेग होगा यदि वह 50 कि. मी. प्रति घंटे के वेग से चलती गाड़ी में 5 कि. मी. प्रति घंटे के वेग से इंजन की ओर चलता है? स्पष्ट है, वेग $50 + 5 = 55$ कि. मी. प्रति घंटा होगा। हमारा उत्तर वेगों के योग के नियम पर आधारित है और इस की सच्चाई में हमें कोई संदेह नहीं है। हमारी गणना सही है कि गाड़ी एक घंटे में 50 कि. मी. चलेगी तथा गाड़ी में यात्री 5 कि. मी. और अधिक चलेगा। इसीलिये सब मिलाकर 55 कि. सी. वेग होगा।

यह स्पष्ट है कि सीमांत वेग की उपस्थिति हमें छोटे और बड़े वेगों के लिये उपरोक्त नियम के व्यापक उपयोग से वंचित करती है। यदि यात्री आईंस्टाइन की गाड़ी में 100 000 कि. मी. प्रति से. के वेग (कल्पित) से चलता है तो रेलवे पथ के सापेक्ष उसका

वेग 240 000 + 100 000 = 340 000 कि. मी. प्रति से. होना चाहिये। परंतु ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि यह प्रकाश-वेग से अधिक है।

इसीलिये वेग जोड़ने का सूत्र जिसका हम अपने दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं, पूर्णतया सही नहीं है। यह केवल प्रकाश-वेग से काफी कम वेगों पर लागू होता है।

पाठक, जो अबतक सापेक्षिकता-सिद्धांत के संबंध में सभी प्रकार के विरोधाभासों से अभ्यस्त हो चुका है, आसानी से समझ जायेगा कि क्यों स्पष्ट प्रतीत होने वाला तर्क, जिसके द्वारा हमने अभी वेगों के योग के सिद्धांत का निगमन किया है अनुपयोगी है। क्योंकि हमने एक घंटे में गाड़ी द्वारा तय किये फासले को गाड़ी मे यात्री द्वारा तय किये फासले से जोड़ा है।

परंतु सापेक्षिकता-सिद्धांत ने हमें दिखाया है कि ये फासले जोड़े नहीं जा सकते। यह इतना ही बेतुका लगता है जितना इस पृष्ठ पर चित्र में दिखाई गयी सड़क के खंड का क्षेत्रफल ज्ञात करने के लिये AB और BC का गुणन करना, यह भूल कर कि पिछले चित्र में वह परिप्रेक्ष्य के कारण विकृत है। इसके अतिरिक्त, स्टेशन के सापेक्ष यात्री का वेग ज्ञात करने के लिये, हमें उसके द्वारा स्टेशन-घड़ी के अनुसार एक घंटे में तय किया फासला मालूम करना चाहिये, जबकि गाड़ी में उसके वेग से पहुँचने के लिये हमने गाड़ी
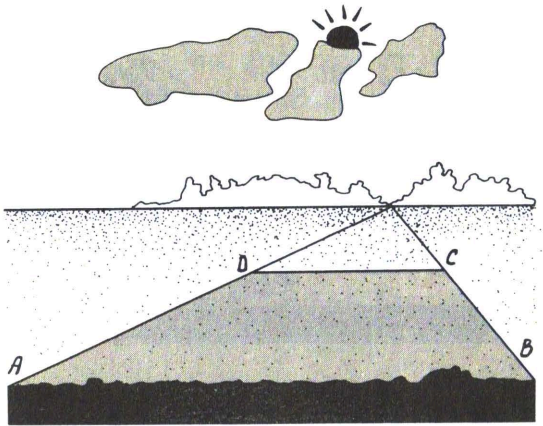
की घड़ी को प्रयुक्त किया, जो, जैसा हमें पहले से पता है, बिल्कुल वही नहीं है।

इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वेग (जिनमें कम से कम) एक प्रकाश वेग से तुलनीय है बिल्कुल भिन्न तरीके से जिसके हम अभ्यस्त नहीं है जोड़े जाते हैं। हम वेगों के विरोधाभासी योग का प्रयोगात्मक रूप से प्रेक्षण तभी कर सकते हैं जब, उदाहरणार्थ, बहते पानी में (पूर्व वर्णित) प्रकाश के प्रसरण का प्रेक्षण करें। यह तथ्य कि बहते पानी में प्रकाश के प्रसरण का वेग निश्चल पानी में प्रकाश के वेग और बहते पानी के वेग के जोड़ के बराबर नहीं, कम ही होता है, सापेक्षिकता के सिद्धांत का सीधा निष्कर्ष है।
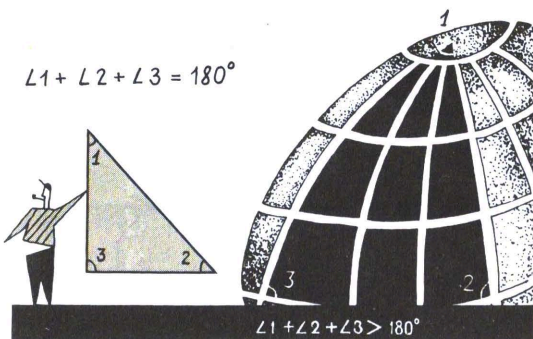
वेग एक विशिष्ट ढंग से जोड़े जाते हैं यदि उनमें से एक वेग ठीक 300 000 कि. मी. प्रति से. हो। यह वेग, जैसा हम जानते हैं, जिन प्रयोगशालाओं से हम इसका प्रेक्षण करते हैं, उनकी चाल से स्वतंत्र और अपरिवर्तनीय रहने के गुण रखता है। दूसरे शब्दों में, हम चाहे जितना भी वेग 300 000 कि. मी. प्रति से. में जोड़ें, हमें फिर वही 300 000 कि. मी. प्रति से. वेग उपलब्ध होगा।

वेगों के योग के सामान्य सूत्र की अनुपयोगिता का एक तुलनात्मक उदाहरण दिया जा सकता है।

जैसा आप जानते हैं, एक समतल त्रिभुज में (देखें चित्र की बायीं ओर), कोण 1, 2 और 3 का जोड़ दो समकोणों के बराबर है। अब कल्पना कीजिये कि पृथ्वी के धरातल पर (चित्र की दायीं ओर देखें) एक त्रिभुज खींचा गया है। इस त्रिभुज

के तीनों कोणों का जोड़ धरातल की गोलाई के कारण दो समकोणों से अधिक होगा। यह अंतर प्रेक्ष्य केवल तभी होगा जब त्रिभुज का परिमाण पृथ्वी के परिमाण के साथ तुलनीय हो।

जैसे पृथ्वी के धरातल पर छोटे क्षेत्रों को मापने के लिये समतल ज्यामिति के सूत्रों का प्रयोग करना संभव है, वैसे छोटे वेगों के लिये हम वेगों के योग का साधारण सूत्र प्रयोग कर सकते हैं।

अध्याय 6

कार्य द्रव्यमान में परिवर्तन लाता है

द्रव्यमान

मान लीजिये हम किसी स्थिर पिंड को किसी निश्चित वेग से चलाना चाहते हैं। हमें इस पर विशेष बल लगाना पड़ेगा। पिंड गति में आ जायेगा और घर्षण जैसे बाह्य बलों की अनुपस्थिति में एक समय के अंतराल में किसी निश्चित वेग से त्वरित हो सकेगा। हम देखेंगे कि भिन्न पिंडों को दत्त बल से निश्चित वेग तक त्वरित करने हेतु समय के भिन्न अंतरालों की आवश्यकता पड़ती है।

घर्षण बल की उपेक्षा करने के लिये कल्पना कीजिये कि व्योम में बराबर आकार के दो गोले हैं; एक शीशे का और दूसरा लकड़ी का बना है। उनमें से प्रत्येक पर समान बल लगायें जबतक वे, उदाहरणतया, 10 कि. मी. प्रति घं. के वेग तक त्वरित न हो जायें।

स्पष्ट है, हमें शीशे के गोले पर लकड़ी के गोले की अपेक्षा अधिक लंबे समय तक इस बल को लगाना पड़ेगा: शीशे के गोले का द्रव्यमान लकड़ी के गोले की अपेक्षा अधिक है। चूँकि स्थिर बल की क्रिया से वेग समय के अनुपात में बढ़ता जाता है, द्रव्यमान उस वेग तक स्थिर पिंड की गति बढाने के लिये आव-

श्यक समय और उस वेग का अनुपात है। द्रव्यमान इस संबंध के साथ समानुपाती है और समानुपातिकता का गुणांक त्वरणकारी बल पर निर्भर करता है।

वर्धमान द्रव्यमान

द्रव्यमान किसी पिंड का एक अतिमहत्त्वपूर्ण गुण है। पिंडों के द्रव्यमान का सदैव अपरिवर्तनीय या स्थिर रहने के हम अभ्यस्त हैं। यह वेग पर निर्भर नहीं करता। हमारे प्रथम कथन से यह परिणाम निक-लता है कि स्थिर बल के सतत उपयोग से वेग उसके कार्यकाल के सीधे अनुपात में बढ़ता है।

यह दृढ़ कथन वेग-संयोजन के सामान्य नियम पर आधारित है। यद्यपि, हमने अभी-अभी सिद्ध किया है कि इस सिद्धांत का सभी परिस्थितियों में उपयोग नहीं किया जा सकता।

एक बल (उदाहरणार्थ) दो सेकेंड तक लगाने के बाद वेग ज्ञात करने के लिये हम क्या करते हैं ? वेगों के योग के सामान्य सूत्र के अनुसार हम प्रथम सेकेंड के अंत में पिंड द्वारा प्राप्त वेग को द्वितीय सेकेंड में प्राप्त वेग से जोड़ते हैं।

ऐसा हम तबतक कर सकते हैं जबतक वेग प्रकाश के वेग तक न पहुँच जाये। इस स्थिति में पुराना सूत्र अपर्याप्त हो जाता है। सापेक्षिकता-सिद्धांत के अनुसार वेगों के योग से इस स्थिति में पुराने योग-सूत्र

के प्रयोग से प्राप्त परिणामों की अपेक्षा हम कुछ कम परिणाम प्राप्त करेंगे। इसका अभिप्राय है कि उच्च वेग बल के कार्यकाल के आनुपातिक नहीं बल्कि कुछ धीरे बढ़ेगा। यह स्पष्ट है क्योंकि प्रकृति में सीमांत वेग उपस्थित है।

अपरिवर्तनीय बल की क्रिया से पिंड का वेग धीरे-धीरे बढ़ता है जब यह प्रकाश-वेग के निकट पहुँचने वाला होता है ; इस प्रकार यह सीमांत वेग को कभी नहीं लांघता।

द्रव्यमान को पिंड के वेग से स्वतंत्र समझा जाता है जबतक पिंड का वेग बल के प्रयोग के समय के अनुपात में बढ़ता है। परंतु पिंड का वेग ज़्योंही प्रकाश के वेग तक पहुँचता है, समय और वेग का अनुपात अदृश्य हो जाता है और द्रव्यमान वेग पर निर्भर हो जाता है। चूँकि त्वरण का समय असीम मात्रा में बढ़ता है और वेग उसके सीमांत मान से अधिक नहीं हो सकता, हम देखते हैं कि द्रव्यमान वेग के साथ बढ़ता है और वह असीम हो जाता है जब पिंड का वेग प्रकाश-वेग तक पहुँचता है।

परिकलन सिद्ध करते हैं कि एक गतिमान पिंड का द्रव्यमान उतना गुना बढ़ता है जितनी उसकी लंबाई घटती है। इस प्रकार, 240 000 कि. मी. प्रति से. के वेग से चलती हुई आईंस्टाइन की गाड़ी का द्रव्यमान विरामावस्था में उसी गाड़ी के द्रव्यमान की अपेक्षा $\frac{10}{6}$ गुना अधिक है।

जब हम सामान्य वेगों से संबंध रखते हैं, जो प्रकाश-वेग की तुलना में तुच्छ होते हैं, तो स्वाभाविक है कि हम द्रव्य-मान में परिवर्तन की उपेक्षा कर सकते हैं। यह वैसे ही है जैसे हम पिंड के वेग पर उसकी माप की उपेक्षा कर सकते हैं, या जैसे प्रेक्षकों के वेगों पर दो घटनाओं के बीच के अंतराल की उपेक्षा कर सकते हैं।

वेग पर द्रव्यमान की सापेक्षिकता-सिद्धांत से निगमित निर्भरता की जाँच हम प्रत्यक्ष रूप से क्षिप्र एलेक्ट्रोनों के प्रेक्षण से कर सकते हैं।

आधुनिक प्रायोगिक युक्तियों से प्रकाश-वेग के निकट वेग से गतिमान एलेक्ट्रोन प्राप्त करना नितांत साधारण बात है। विशेष त्वरित्रों में एलेक्ट्रोनों को उस वेग तक त्वरित किया जा सकता है, जो प्रकाश-वेग से 30 कि. मी. प्रति से. से भी कम का अंतर रखता है।

इस प्रकार, आधुनिक **भौतिकी** इस अवस्था में है कि विशाल वेग से गतिमान एलेक्ट्रोन के द्रव्य-मान की तुलना विरामावस्थ एलेक्ट्रोन के द्रव्यमान से कर सकती है। परिणाम वेग पर द्रव्यमान की निर्भरता के बारे में सापेक्षिकता-सिद्धांत के निष्कर्षों की सत्यता सिद्ध करते हैं।

पिंड के द्रव्यमान में वृद्धि इसपर संपन्न कार्य से घनिष्ठ संबंध रखता है: वह पिंड को गति में लाने के लिये आवश्यक बल के साथ समानुपाती होता है। इसके लिये पिंड को केवल गति में लाने के लिये कार्य संपन्न करने की आवश्यकता नहीं है। पिंड पर संपन्न कोई भी कार्य, पिंड की ऊर्जा में कोई भी वृद्धि उसके द्रव्यमान को बढ़ाती है। इसीलिये, उदाहरणार्थ, गर्म पिंड का द्रव्यमान ठंडे पिंड की अपेक्षा अधिक होता है, संपीडित कमानी (स्प्रिंग) का द्रव्यमान असंपीडित के द्रव्यमान की अपेक्षा अधिक होता है। यह बात और है कि द्रव्यमान-परिवर्तन और ऊर्जा-परिवर्तन के बीच समानुपातिकता-गुणांक नगण्य होता है: पिंड के द्रव्यमान में एक ग्राम की वृद्धि के लिये हमें 25 000 000 किलोवाट घंटा के बराबर ऊर्जा संप्रेषित करनी पड़ती है।

यही कारण है कि साधारण स्थितियों में पिंड के द्रव्यमान में परिवर्तन काफी नगण्य होता है और अतिसूक्ष्म मापन से भी अवलोकित नहीं होता। इस प्रकार, यदि हम एक टन पानी को 0°C से क्वथनांक तक गर्म करें, तो इसका द्रव्यमान एक ग्राम का लगभग पचास लाखवां भाग ही बढ़ेगा।

एक बंद भट्टी में एक टन कोयला जला कर दहन-उत्पाद को ठंडा करने पर उसका द्रव्यमान मूल कोयला

और आक्सीजन के कुल द्रव्यमान से एक ग्राम का $\frac{1}{3000}$ अंश ही कम होगा। यह लुप्त द्रव्यमान दहन से विलगित ताप के रूप में निकल जाता है।

लेकिन आधुनिक भौतिकी में हम ऐसी संवृत्तियां भी जानते हैं, जिनमें द्रव्यमान-परिवर्तन की नितांत विशिष्ट भूमिका होती है।

ऐसी संवृत्तियां तब होती हैं जब परमाणु-नाभिक आपस में टकराते हैं और इसके फलस्वरूप नये नाभिक बन जाते हैं। उदाहरणार्थ, जब लीथियम का एक परमाणु हाइड्रोजन के एक परमाणु से टकराता है, तो हीलियम के दो परमाणु बनते हैं, द्रव्यमान में परिवर्तन उसके मूल मान का $\frac{1}{400}$ अंश होता है।

हमने पहले ही कहा है कि पिंड के द्रव्यमान में एक ग्राम की वृद्धि के लिये हमें 25 000 000 किलोवाट घंटा की ऊर्जा लगानी पड़ती है। इसलिये एक ग्राम लीथियम और हाइड्रोजन के मिश्रण को हीलियम में बदलने पर 400 गुना कम ऊर्जा विलगित होती है:
$\frac{25\,000\,000}{400} = 60\,000$ किलोवाट घंटा!

अब एक ऐसे प्रश्न का उत्तर देने की कोशिश करें: प्रकृति में सुलभ कौनसा पदार्थ सबसे अधिक महंगा है (यदि भार के हिसाब से गणना करें)? रेडियम को बहुत महंगा माना जाता है। हाल में इसके एक ग्राम की कीमत करीब 25000 रूबल आँकी गयी थी।

परंतु प्रकाश की कीमत क्या है?

एक विद्युत बल्ब से हम कुल व्यय ऊर्जा का बीसवां भाग ही दृश्य प्रकाश के रूप में वापस प्राप्त करते हैं। इसलिये एक ग्राम प्रकाश 25 000 000 किलोवाट घंटा से 20 गुना अधिक कार्य, अर्थात् 500 000 000 किलो-वाट घंटा के अनुरूप है। यदि हम मानें कि एक किलो-वाट-घंटा की कीमत एक कोपेक है, तो 5 000 000 रूबल जितनी कीमत हो जायेगी। इस प्रकार एक ग्राम प्रकाश एक ग्राम रेडियम से बीस गुना अधिक महंगा है।

उपसंहार

इस प्रकार, विश्वस्त प्रयोग हमें सापेक्षिकता-सिद्धांत को सत्य मानने के लिये विवश करते हैं। यह सिद्धांत हमारी परिवेशी दुनिया के उन आश्चर्यजनक गुणों को प्रकाश में लाता है, जो सतही अध्ययन से प्रकट नहीं होते।

पिछले पृष्ठों पर हमने देखा कि सापेक्षिकता-सिद्धांत हमारी उन अवधारणाओं में मौलिक परिवर्तन लाता है, जिन्हें मानव सदियों से अपने दैनंदिन अनुभवों से अर्जित करता रहा है।

तो क्या यह सामान्य अवधारणाओं की पूर्ण हार नहीं है?

क्या इसका मतलब यह नहीं है कि सापेक्षिकता-सिद्धांत ज्ञात होने के पहले की पूरी भौतिकी बेकार हो गयी; अब उसकी कोई आवश्यकता नहीं रही?

यदि ऐसी बात होती, तो वैज्ञानिक अन्वीक्षण का काम ही निरर्थक हो जाता। हम कभी भी आश्वस्त नहीं रहते कि आने वाले कल की खोजें हमारे आज के श्रम को व्यर्थ नहीं करेंगी।

लेकिन अब एक ऐसे यात्री की कल्पना करें, जो आईंस्टाइन की गाड़ी में नहीं, किसी साधारण गाड़ी

में यात्रा कर रहा है और अपनी घड़ी में सापेक्षिकता-सिद्धांत के अनुसार सुधार लाना चाहता है, ताकि उसकी घड़ी स्टेशन की घड़ी से पीछे न रह जाये। ऐसे यात्री पर लोग हसेंगे ही। बात सिर्फ यह नहीं है कि सुधार का मान सेकेंड के एक नगण्य अंश के बराबर होता है, बल्कि यह भी कि अच्छी से घड़ी पर गाड़ी के झटकों का असर कहीं ज्यादा होता है।

यदि रसायनविद यह शंका करने लगे कि गर्म करने पर पानी का द्रव्यमान स्थिर रहता है या नहीं, तो स्पष्ट है कि उसका दिमाग ठीक नहीं है। लेकिन पर-माणु-नाभिकों की टक्कर का प्रेक्षण करते वक्त यदि भौतिकविद नाभिकीय रूपांतरणों के कारण द्रव्यमान में होने वाले परिवर्तनों को ध्यान में नहीं रखे, तो उसे अनाड़ी मान कर प्रयोगशाला से निकाल देना चाहिये।

इंजिनियर पुरानी भौतिकी के नियमानुसार ही मोटर बनाया करेंगे, क्योंकि उस पर सापेक्षिकता-सिद्धांत के अनुसार जो अतिरिक्त प्रभाव पड़ना चाहिये, वह उस पर अनायास आ बैठे किसी जीवाणु के प्रभाव से भी कम होगा। लेकिन क्षिप्र एलेक्ट्रोनों का प्रेक्षण करने वाले भौतिकविद के लिये एलेक्ट्रोन के वेग-परि-वर्तन के साथ-साथ उसके द्रव्यमान-परिवर्तन को भी ध्यान में रखना जरूरी है।

इस प्रकार, सापेक्षिकता-सिद्धांत पुराने विज्ञान द्वारा स्थापित नियमों एवं अवधारणाओं को खंडित नहीं करता, उन्हें और भी गहन बनाता है। सापेक्षिकता-

सिद्धांत वह सीमा निर्धारित करता है, जिसके भीतर पुरानी अवधारणाएं प्रयुक्त हो सकती हैं और जिसके बाहर वे गलत परिणाम देने लगती हैं। इस नये सिद्धांत के जन्म से पहले के भौतिकीय नियम गलत नहीं करार किये जाते, सिर्फ उनके उपयोग की सीमा निर्धारित की जाती है।

सापेक्षिकता-सिद्धांत को ध्यान में रखने वाली भौतिकी (सापेक्षिकीय भौतिकी) और पुरानी (क्लासिकल) भौतिकी के बीच लगभग वैसा ही अंतर है, जो पृथ्वी के वर्तुल आकार को ध्यान में रखने वाले उच्च ज्यादेजी और पृथ्वी के गोल आकार की उपेक्षा करने वाले प्राथमिक (सरल) ज्यादेजी के बीच है। उच्च ज्यादेजी उदग्र रेखा (साहुल-रेखा) को सापेक्षिक मानती है; इसी तरह सापेक्षिकीय भौतिकी पिंडों के आकार (माप) और दो घटनाओं के बीच के अंतराल को सापेक्षिक मानती है (क्लासिकल भौतिकी के लिये यह सापेक्षिकता अस्तित्व ही नहीं रखती)।

जिस प्रकार उच्च ज्यादेजी प्राथमिक (सरल) ज्यादेजी का विकसित रूप है, उसी प्रकार सापेक्षिकीय भौतिकी भी क्लासिकल भौतिकी का विकसित तथा परिवर्धित रूप है।

यदि हम यह मान लेंगे कि पृथ्वी की त्रिज्या अनंत बड़ी है, तो हम वर्तुली ज्यामिति (वर्तुल की सतह पर निर्मित ज्यामिति) से तलमिति – समतल की ज्यामिति – के क्षेत्र में संक्रमण कर जायेंगे। इस स्थिति में

पृथ्वी वर्तुलाकार नहीं, एक अनंत समतल की तरह हो जायेगी, जिसपर उदग्र रेखा परम अर्थ ग्रहण कर लेगी, त्रिभुज के तीनों कोण मिल कर दो समकोण के बराबर हो जायेंगे।

इसी तरह सापेक्षिकीय से क्लासिकल भौतिकी में संक्रमण भी संभव है, यदि हम यह मान लेंगे कि प्रकाश का वेग अनंत बड़ा है, अर्थात प्रकाश का प्रसरण क्षणिक होता है।

सचमुच, यदि प्रकाश का प्रसरण क्षणिक है, तो जैसा कि हम देख चुके हैं, समकालीनता की अवधारणा परम बन जाती है। पिंडों के आकार (माप) और घटनाओं के बीच के अंतराल उन प्रयोगशालाओं के लिये निरपेक्ष परम अर्थ ग्रहण कर लेते हैं, जहां से उनका प्रेक्षण होता है। अतः प्रकाश-वेग को परम मान लेने पर सभी क्लासिकल अवधारणाएं सुरक्षित हो जाती हैं।

लेकिन सांत प्रकाश-वेग के साथ दिक्काल (व्योम और समय) की पुरानी अवधारणाओं को सुरक्षित रखने की कोशिश करने पर हमारी स्थिति उस व्यक्ति की तरह हो जाती है, जो जानता है कि पृथ्वी गोल है, फिर भी विश्वास करता है कि जिस शहर में वह रहता है, वहां की उदग्र रेखा परम उदग्र है और इसीलिये वह किसी दूरस्थ शहर में जाने से डरता है कि वह पृथ्वी से लुढ़क कर विश्व-व्योम में खो जायेगा।

पाठकों से

मीर प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और डिजाइन संबंधी आपके विचारों के लिये आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। कृपया हमें इस पते पर लिखिये :

मीर प्रकाशन
पेर्वी रीज्स्की पेरेऊलोक, २
मास्को, सोवियत संघ

लेव लंदाऊ, यूरी रूमेर

"सापेक्षिकता-सिद्धान्त क्या है?"

(एक ग्राम प्रकाश की कीमत. वस्तुएं सिकुड़ती हैं. वेगों के नखरे. सितारों की यात्रा. कार्य द्रव्यमान में परिवर्तन लाता है. समय की मशीन)

परिचय: सापेक्षिता-सिद्धान्त के बिना आधुनिक भौतिकी लगभग उसी तरह संभव नहीं है जिस तरह अणुओं और परमाणुओं की अवधारणा के बिना। समझने के दृष्टिकोण से इसकी गणना 'कठिन' सिद्धान्तों में होती है, इसीलिये यह पुस्तक विशेष मूल्यवान है: सापेक्षिकता-सिद्धान्त की मुख्य बातों को ललित एवं सरल भाषा में समझाने की कोशिश उन लोगों ने की है, जो भौतिकी के इस क्षेत्र में कार्यशील रहे हैं और इस सिद्धान्त के प्रकांड विद्वान माने जाते हैं। इस पुस्तक के लेखक प्रोफेसर यूरी रूमेर और स्वर्गीय अकादमीशियन लेव लंदाऊ लेनिन तथा नोबेल पुरस्कारों से सम्मानित हैं।